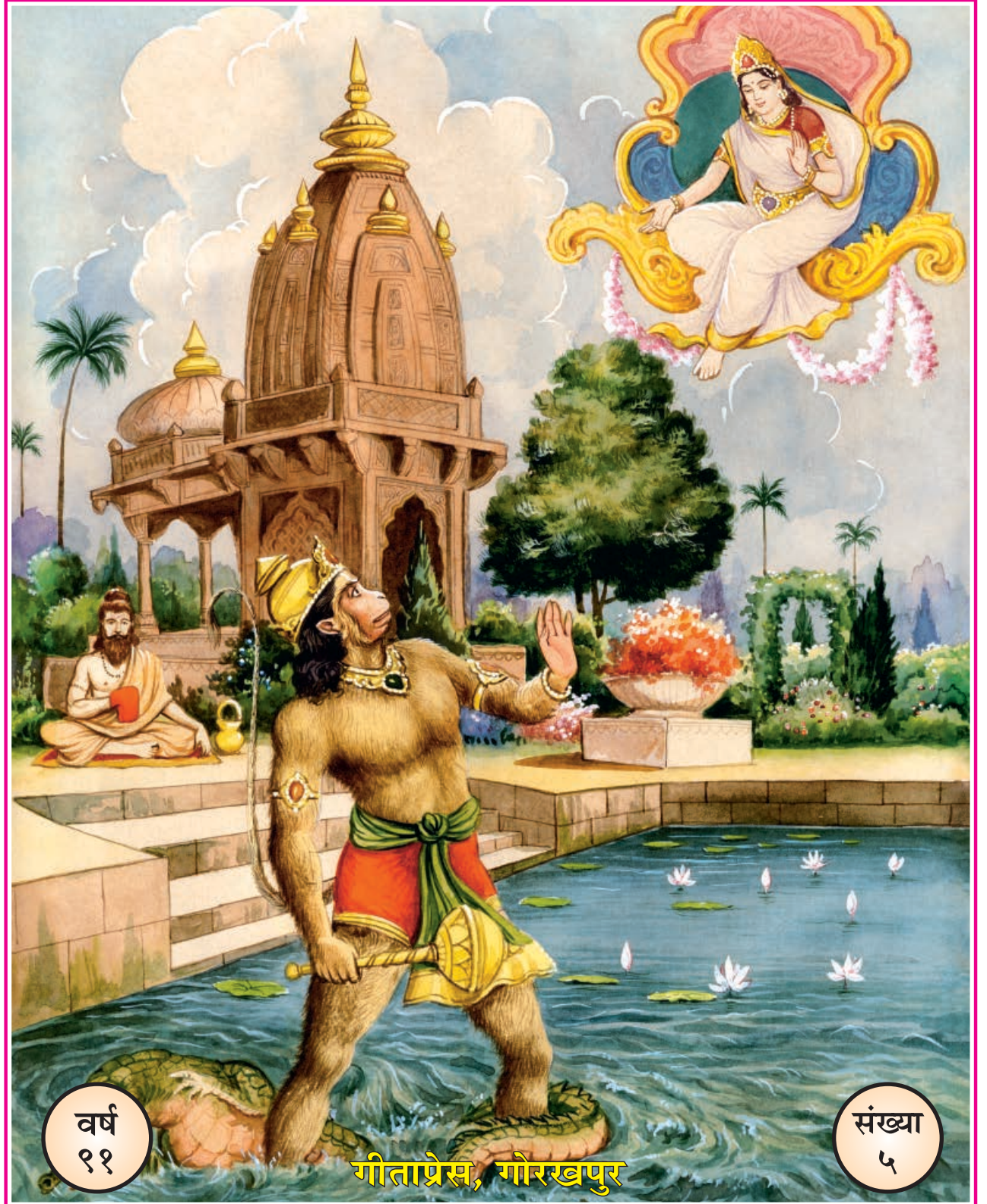


कल्याण

मूल्य १० रुपये





COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



गो-गोपी-गोपाल

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



कल्याण

वन्दे वन्दनतुष्टमानसमतिप्रेमप्रियं प्रेमदं पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्यैकवासं शिवम् ।
सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं विष्णुब्रह्मानुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शङ्करम् ॥

वर्ष
९९

गोरखपुर, सौर ज्येष्ठ, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, मई २०१७ ई०

संख्या
५

पूर्ण संख्या १०८६

‘माधुरी मुरली अधर धरें’

माधुरी मुरली अधर धरें ।
बैठे मदनगुपाल मनोहर सुंदर कदंब तरें ॥
इत-उत अमित ब्रज-वधू ठाढ़ीं, बिबिध बिनोद करें ।
गाय-मयूर, मधुप रस-माते, नहीं समाधि टरें ॥
झाँकी अति बाँकी ब्रज-सुत की, कलुष-कलेस हरें ।
बसत नयन-मन नित्य निरंतर, नव-नव रति सँचरें ॥

अर्थात् मदनमोहन भगवान् श्रीकृष्ण मनोहर गोपाल-वेशमें एक सुन्दर कदम्बवृक्षके नीचे [रत्नवेदिकायुक्त सुवर्ण-सिंहासनपर] आसीन हैं । उनके अधरोंपर मुरली सुशोभित हो रही है और वे उसे मधुर स्वरमें बजा रहे हैं । उनके इधर-उधर बहुत-सी ब्रजवधुएँ खड़ी हैं और अनेक प्रकारके बिनोद कर रही हैं । गौएँ, मयूरगण और भ्रमर [मुरली-ध्वनिसे उत्पन्न संगीतरूपी] रसका पानकर मतवाले होकर समाधि-अवस्थामें पहुँच गये हैं और उनकी समाधि किसी प्रकार टूट नहीं रही है । ब्रजराजकुँवरकी यह बाँकी झाँकी पाप और क्लेशको हरनेवाली है । जिसके अन्तःचक्षुओंमें यह नित्य-निरन्तर बसी रहती है, उसके अन्तःकरणमें उन गोपाल कृष्णके प्रति नव-नवायमान प्रेम संचरित होता रहता है । [पद-रत्नाकर]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २, १५, ०००)

कल्याण, सौर ज्येष्ठ, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, मई २०१७ ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- 'माधुरी मुरली अधर धरें'	३	१५- सीता-स्वयंवर [राम-कथा] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र')	२८
२- कल्याण	५	१६- 'राम राम जपिये' [कविता] (श्रीओमप्रकाशजी अग्निहोत्री 'सुबोध')	३१
३- मकरी अप्सराका उद्धार [आवरणचित्र-परिचय]	६	१७- मृत्यु क्या है ? (श्रीरणवीरजी शास्त्री) [प्रेषक—श्रीनीरजकुमारजी वैश्य]	३२
४- शिव-तत्त्व (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) .	७	१८- ब्रह्मलीन योगिराज श्रीदेवराहा बाबाजीके उपदेश [संत-वाणी] [प्रेषक—श्रीसंकटासिंहजी]	३४
५- भला पड़ोसी कौन?—एक शोध (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) .	१०	१९- द्वादश ज्योतिर्लिंगोंके अर्चा-विग्रह [ज्योतिर्लिंग-परिचय]	३५
६- मौन-व्याख्यान (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ...	१४	२०- मामा प्रयागदासजी [संत-चरित]	३७
७- भक्तको दुःख नहीं होता (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल)	१७	२१- अर्चन [कविता] (श्रीमती डॉ० उर्मिला किशोरजी)	३९
८- जीवन-दर्शन	१८	२२- दुःख है क्या ? (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) [प्रस्तुति—साधन-सूत्र : श्रीहरिमोहनजी]	४०
९- साधकोंके प्रति— (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१९	२३- गोभक्त रामसिंह (मुखिया श्रीविद्यासागरजी)	४१
१०- शिवसे विनय [कविता] (श्रीचन्द्रशेखरजी शुक्ल) [प्रेषक—श्रीरविन्द्रजी अग्रवाल]	२०	२४- साधनोपयोगी पत्र	४३
११- महाभारतोक्त शतरुद्रियस्तोत्र	२१	२५- व्रतोत्सव-पर्व [आषाढमासके व्रतपर्व]	४५
१२- 'को जाँचिये संभु तजि आन' [कविता]	२४	२६- कृपानुभूति	४६
१३- परमात्माके साथ है हमारा नित्य सम्बन्ध (श्रीताराचन्दजी आहूजा)	२५	२७- पढ़ो, समझो और करो	४७
१४- जग-जीव सभी रामाश्रित हैं [कविता] (श्रीसुरेशजी शुक्ल 'मृदुल')	२७	२८- मनन करने योग्य	५०

चित्र-सूची

१- मकरी-उद्धार	(रंगीन) आवरण-पृष्ठ	७- ओंकारेश्वर मन्दिर	(इकरंगा)	३५
२- गो-गोपी-गोपाल	(") मुख-पृष्ठ	८- श्रीकेदारेश्वर मन्दिर	(")	३६
३- मकरी-उद्धार	(इकरंगा)	९- श्रीकेदारेश्वर ज्योतिर्लिंग, श्रीकेदारनाथ धाम	(")	३६
४- भगवान् दक्षिणामूर्ति	(")	१०- श्रीराम-लक्ष्मण और जानकीजीकी सेवामें मामा प्रयागदास	(")	३८
५- अर्जुनको शिव-महिमा बताते व्यासजी ...	(")			
६- सुमेधामुनिके आश्रमपर राजा सुरथ ..	(")			

एकवर्षीय शुल्क

सजिल्द ₹२२०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय॥

जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥

जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

विदेशमें Air Mail }
सजिल्द शुल्क }

वार्षिक US\$ 50 (₹3000)

पंचवर्षीय US\$ 250 (₹15,000)

{ Us Cheque Collection
Charges 6\$ Extra

पंचवर्षीय शुल्क

सजिल्द ₹११००

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक—राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

09235400242/244

सदस्यता-शुल्क—व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।

Online सदस्यता-शुल्क—भुगतानहेतु—gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

कल्याण

याद रखो—मैं भगवान्की कृपाशक्तिपर विश्वास करके जिस साधन-मार्गपर चल रहा हूँ, मेरे लिये वही प्रशस्त है और मैं उसमें निश्चय ही सफलता प्राप्त करूँगा। ऐसा कभी मत सोचो कि साधन ठीक है या नहीं, अथवा सफलता मिलेगी या नहीं। सन्देह मार्गमें रोक देता है और विश्वास लक्ष्यपर पहुँचा देता है।

विश्वास करो और निश्चय करो—मैं इस बार मानव-शरीर धारण करके जगत्में आया ही इसलिये हूँ कि अबकी बार मैं शरीरके बन्धनसे, जो अज्ञानजनित है, छूटकर ही रहूँगा। अज्ञानके कारण ही मैं अनादि कालसे अबतक भटकता रहा। अब नहीं भटकूँगा, नहीं भटकूँगा।

याद रखो—अज्ञानका सर्वथा समूल नाश होना और भगवत्तत्त्वका साक्षात्कार होना एक ही बात है, यह भगवत्तत्त्व-साक्षात्कार ही मानव-जीवनका चरम एवं परम लक्ष्य है, और यह निश्चय करो कि मैं उस भगवत्तत्त्व-साक्षात्कारका सर्वथा अधिकारी होकर ही आया हूँ तथा उसे प्राप्त करके ही रहूँगा।

याद रखो—मेरे इस अधिकारका एकमात्र बल है भगवान्की कृपा और वह भगवान्की कृपा मुझे अनन्त और असीम रूपमें प्राप्त है। मैं उस कृपासमुद्रमें निमग्न हूँ। इसलिये अब मुझे यह भी सोचना नहीं है कि भगवत्तत्त्वका साक्षात्कार भी मुझे करना है; क्योंकि भगवत्कृपाके अथाह समुद्रमें निमग्न हो जानेके बाद न तो कोई सोच-विचार होता है और न उसकी आवश्यकता ही रहती है।

याद रखो—भगवान्की कृपाशक्ति समस्त भागवती शक्तियोंकी स्वामिनी हैं। सारी शक्तियाँ इन्हींकी अनुगता होकर कार्य करती हैं। यह महती कृपाशक्ति जिसको अपना लेती है, वह भगवत्तत्त्व-साक्षात्कार ही क्या भगवान्को—समग्ररूपसे—सब प्रकारसे पाकर निहाल हो जाता है।

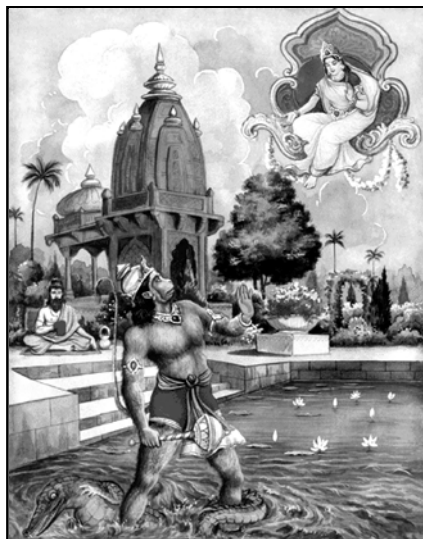
याद रखो—जहाँतक अपने पुरुषार्थ तथा अपनी पृथक् क्षुद्र शक्तिपर आस्था है तबतक एक तुच्छ अहंकारका तुमपर आधिपत्य है। ऐसे अहंकारके रहते

तुम्हारे लिये वस्तुतः भगवान्की कृपाशक्तिका कार्य रुका रहता है। कृपाशक्ति चाहती है—पूर्ण निर्भरता, पूर्ण प्रपत्ति और पूर्ण आत्मनिवेदन। अपनेको अपनी सारी शक्तियोंसहित सारी शक्तियोंके उद्गम और आकर-स्वरूप भगवान्के समर्पण कर दो। अपने समस्त अहंकारको जला दो, गलाकर बहा दो और सर्वतोभावसे कृपा माताका आश्रय ग्रहण करो। फिर देखोगे, कितनी जल्दी और कितनी सुकरता एवं सुन्दरतासे तुम्हारी यह आखिरी जीवनयात्रा सफल होती है।

याद रखो—भगवत्कृपा तुम्हें अपनाने, तुमपर बरसने, तुम्हें अपनी महान् मधुर और शीतल छायाका आश्रय देनेके लिये सदा-सर्वदा तैयार है तथा वह यह भी नहीं देखती कि तुम्हारा पूर्व इतिहास—अबतकका आचरण कैसा है। तुम पुण्यात्मा हो या पापी, तुम सात्त्विक हो या तामस, तुम ब्राह्मण हो या चाण्डाल, तुम देवता हो या दानव, तुम हिन्दू हो या मुसलमान, तुम धनी हो या गरीब और तुम पण्डित हो या मूर्ख—वह तो केवल देखती है तुम्हारे अन्दरका भाव। यदि तुम सचमुच अन्य सारे साधनोंसे हताश-निराश होकर और एक विश्वास-भरोसेके साथ उसकी ओर निहार रहे होगे तो वह उसी क्षण तुम्हें अपना लेगी, तुमपर चारों ओरसे बरस पड़ेगी और तुम्हें अपनी सुखद छायाका आश्रय देकर निश्चिन्त, निर्भय और निष्काम बना देगी। तुम्हारी कोई भी कामना अपूर्ण नहीं रहेगी उस समय; परंतु तुम्हें कामना और उसकी पूर्ति का भी पता नहीं रहेगा। तुम उस समय उस कृपाशक्तिकी पवित्र लहरोंके साथ घुल-मिलकर स्वयं पवित्र-कृतार्थरूप हो जाओगे।

विश्वास करो—भगवान्की कृपा तुमपर है ही। वह सदा सभीपर है। सभीको प्राप्त है। तुम विश्वास नहीं करते—मानते नहीं, इसीसे अन्य साधनोंका सहारा खोजते हो और इसीसे उस नित्यप्राप्त जन्मसिद्ध अपने परम धनसे वंचित हो रहे हो!

मकरी अप्सराका उद्धार



लंका में लक्ष्मण और मेघनाद के बीच भयंकर युद्ध हो रहा था। जब मेघनाद ने अपने प्राणों पर संकट देखा तो उसने ब्रह्माजी की दी हुई शक्तिका लक्ष्मण पर प्रहार किया। उससे घायल होकर लक्ष्मण जी मूर्च्छित हो गये। लक्ष्मण जी की चिकित्सा के लिये हनुमान् जी लंका से सुषेण वैद्य को सोते हुए ही घर सहित उठा लाये। सुषेण ने कहा, 'हिमालय के द्रोणाचल शिखर पर संजीवनी बूटी नामक औषधि है। उसे सुबह होने के पहले ही ले आना चाहिये। तभी इनके प्राण बच सकते हैं।' वैद्य सुषेण की बातें सुनकर सबने आशा भरी आँखों से हनुमान् जी की ओर देखा। वे तुरन्त ही द्रोणाचल जाने के लिये तैयार हो गये। रावण ने सोचा कि किसी प्रकार हनुमान् की यात्रा में विघ्न डाला जाय, जिससे वे औषधि लेकर समय से न लौट सकें। वह कालनेमि राक्षस के पास गया तथा उससे कहा, 'तुम ऐसी माया रचो कि लक्ष्मण के प्राण बचाने के लिये औषधि लेकर हनुमान् समय से लौट न सकें।' रावण की बातें सुनकर कालनेमि ने कहा, 'नाथ! राम के दूत हनुमान् को माया से मोहित कर पाने में कोई भी समर्थ नहीं है। मैं ऐसा प्रयत्न करूँगा तो मुझे निश्चित रूप से मृत्यु के मुँह में जाना होगा।' कालनेमि की बातें सुनकर रावण बहुत ही क्रोधित हो उठा। उसने कहा 'कालनेमि! यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगे तो तुम्हें मेरे ही हाथ से मरना होगा।' कालनेमि ने सोचा कि जब मरना ही है तो मैं इस

मारा जाऊँ ? यह सोचकर उसने उनके मार्गमें एक बहुत ही सुन्दर आश्रमका निर्माण किया। स्वयं मुनिका वेश बनाकर उस आश्रममें बैठ गया। हनुमान्जी जब उस आश्रमके पास पहुँचे तब उन्हें बड़े जोरोंकी प्यास लगी। वे शीघ्र ही कपटी मुनि कालनेमिके आश्रममें जा पहुँचे। उसको प्रणाम करके कहा, 'मुनिवर ! मुझे बड़े जोरकी प्यास लगी है, यहाँ जल कहाँ मिल सकेगा ?'

कपटी कालनेमिने कहा, 'रावण और राममें महान् युद्ध हो रहा है। रामजी जीतेंगे इसमें सन्देह नहीं है। हे भाई! मैं यहाँ रहता हुआ ही सब देख रहा हूँ। मुझे ज्ञानदृष्टिका बहुत बड़ा बल है। मेरे इस कमण्डलुमें शीतल जल भरा हुआ है। तुम इसे पीकर प्यास बुझा लो।' हनुमान्जीने कहा, 'थोड़े जलसे मेरी प्यास नहीं बुझेगी। आप मुझे कोई जलाशय बता दीजिये।' कालनेमिने उन्हें एक सुन्दर जलाशय दिखाते हुए कहा, 'तुम वहाँ जाकर अपनी प्यास बुझा लो और स्नान भी कर लो। इसके बाद मैं तुम्हें दीक्षा दूँगा।' उसकी बातें सुनकर हनुमान्जी शीघ्र ही उस जलाशयके पास पहुँच गये। स्नान करनेके लिये ज्यों ही वे उस जलाशयके भीतर गये, त्यों ही एक मकरीने उनका पैर पकड़ लिया। हनुमान्जीने तुरन्त ही उसका मुँह फाड़कर उसे मार डाला। हनुमान्जीद्वारा मारे जाते ही वह मकरी दिव्य अप्सराका वेश धारण करके विमानमें बैठकर आकाशमें पहुँच गयी। उसने हनुमान्जीसे कहा, 'पवनपुत्र हनुमान्! एक मुनिके शापके कारण मुझे मकरी बनना पड़ा था। हे रामदूत! तुम्हारे दर्शनसे आज मैं पवित्र हो गयी। मुनिका शाप मिट गया। आश्रममें बैठा हुआ यह मुनि कपटी घोर निशाचर है।'।

उस अप्सराकी बात सुनकर महाबली हनुमान्जी तुरन्त ही उस कपटी मुनि कालनेमिके पास जा पहुँचे और कहा, 'मुनिवर! आप पहले मुझसे गुरुदक्षिणा ले लीजिये। मन्त्र आप मुझे बादमें दीजियेगा।' यह कहकर उसको अपनी पँछमें लपेट लिया और पटककर मार डाला। मरते समय कालनेमिने अपना असली राक्षसका रूप प्रकट कर दिया। मुखसे राम-राम कहा। इस प्रकार

शिव-तत्त्व

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

[गतांक ४ पृ०-सं० ९ से आगे]

‘शिव’ शब्द नित्य, विज्ञानानन्दधन परमात्माका वाचक है। यह उच्चारणमें बहुत ही सरल, अत्यन्त मधुर और स्वाभाविक ही शान्तिप्रद है। ‘शिव’ शब्दकी उत्पत्ति ‘वश कान्तौ’ धातुसे हुई है, जिसका तात्पर्य यह है कि जिसको सब चाहते हैं, उसका नाम ‘शिव’ है। सब चाहते हैं अखण्ड आनन्दको। अतएव ‘शिव’ शब्दका अर्थ आनन्द हुआ। जहाँ आनन्द है वहीं शान्ति है और परम आनन्दको ही परम मंगल और परम कल्याण कहते हैं, अतएव ‘शिव’ शब्दका अर्थ परम मंगल, परम कल्याण समझना चाहिये। इस आनन्ददाता, परम कल्याणरूप शिवको ही शंकर कहते हैं। ‘शं’ आनन्दको कहते हैं और ‘कर’ से करनेवाला समझा जाता है, अतएव जो आनन्द करता है, वही ‘शंकर’ है। ये सब लक्षण उस नित्य, विज्ञानानन्दधन परम ब्रह्मके ही हैं।

इस प्रकार रहस्य समझकर शिवकी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक उपासना करनेसे उनकी कृपासे उनका तत्त्व समझमें आ जाता है। जो पुरुष शिव-तत्त्वको जान लेता है, उसके लिये फिर कुछ भी जानना शेष नहीं रह जाता। शिव-तत्त्वको हिमालयतनया भगवती पार्वती यथार्थरूपसे जानती थीं, इसीलिये छद्मवेषी स्वयं शिवके बहकानेसे भी वे अपने सिद्धान्तसे तिलमात्र भी नहीं टलीं। उमा-शिवका यह संवाद बहुत ही उपदेशप्रद और रोचक है।

शिवतत्त्वैकनिष्ठ पार्वती शिवप्राप्तिके लिये घोर तप करने लगीं। माता मेनकाने स्नेहकातरा होकर उ (वत्से!) मा (ऐसा तप न करो) कहा, इससे उसका नाम 'उमा' हो गया। उन्होंने सूखे पत्ते भी खाने छोड़ दिये, तब उनका 'अपर्णा' नाम पड़ा। उनकी कठोर तपस्याको देख-सुनकर परम आश्चर्यान्वित हो ऋषिगण भी कहने लगे कि 'अहो, इसको धन्य है, इसकी तपस्याके सामने दूसरोंकी तपस्या कुछ भी नहीं है।' पार्वतीकी इस तपस्याको देखनेके लिये एक समय स्वयं भगवान् शिव जटाधारी वृद्ध ब्राह्मणके वेषमें तपोभूमिमें आये और पार्वतीके द्वारा

फल-पुष्पादिसे पूजित होकर उसके तपका उद्देश्य शिवसे विवाह करना है, यह जानकर कहने लगे—

‘हे देवि! इतनी देर बातचीत करनेसे तुमसे मेरी मित्रता हो गयी है। मित्रताके नाते मैं तुमसे कहता हूँ, तुमने बड़ी भूल की है। तुम्हारा शिवके साथ विवाह करनेका संकल्प सर्वथा अनुचित है। तुम सोनेको छोड़कर काँच चाह रही हो, चन्दन त्यागकर कीचड़ पोतना चाहती हो। हाथी छोड़कर बैलपर मन चलाती हो। गंगाजलका परित्यागकर कुएँका जल पीनेकी इच्छा करती हो। सूर्यका प्रकाश छोड़कर खद्योतको और रेशमी वस्त्र त्यागकर चमड़ा पहनना चाहती हो। तुम्हारा यह कार्य तो देवताओंकी सन्निधिका त्यागकर असुरोंका साथ करनेके समान है। उत्तमोत्तम देवोंको छोड़कर शंकरपर अनुराग करना सर्वथा लोकविरुद्ध है।

जरा सोचो तो सही, कहाँ तुम्हारा कुसुम-सुकुमार शरीर और त्रिभुवनकमनीय सौन्दर्य और कहाँ जटाधारी, चिताभस्मलेपनकारी, श्मशानविहारी, त्रिनेत्र, भूतपति महादेव! कहाँ तुम्हारे घरके देवतालोग और कहाँ शिवके पार्षद भूत-प्रेत! कहाँ तुम्हारे पिताके घरके बजनेवाले सुन्दर बाजोंकी ध्वनि और कहाँ उस महादेवके डमरू, सिंगी और गाल बजानेकी ध्वनि! न महादेवके माँ-बापका पता है, न जातिका! दरिद्रता इतनी कि पहननेको कपड़ातक नहीं है! दिगम्बर रहते हैं, बैलकी सवारी करते हैं और बाघका चमड़ा ओढ़े रहते हैं! न उनमें विद्या है और न शौचाचार ही है। सदा अकेले रहनेवाले, उत्कट विरागी, मुण्डमालाधारी महादेवके साथ रहकर तुम क्या सुख पाओगी?’

पार्वती और अधिक शिव-निन्दा न सह सकीं। वे तमककर बोलीं—‘बस, बस, बस रहने दो, मैं और अधिक सुनना नहीं चाहती। मालूम होता है, तुम शिवके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानते। इसीसे यों मिथ्या प्रलाप कर रहे हो। तम किसी धर्त ब्रह्मचारीके रूपमें यहाँ आये

सिवकी दई संपदा देखत, श्री-सारदा सिहानी ॥

उपर्युक्त साधनोंको मनुष्य कटिबद्ध होकर ज्यों-ज्यों करता जाता है, त्यों-ही-त्यों उसके अन्तःकरणकी पवित्रता, रहस्य और प्रभावका अनुभव तथा अतिशय श्रद्धा एवं विशुद्ध प्रेमकी उत्तरोत्तर वृद्धि होती चली जाती है। इसलिये कटिबद्ध होकर उपर्युक्त साधनोंको करनेके लिये कोशिश करनी चाहिये। इन सब साधनोंमें भगवान् सदाशिवका प्रेमपूर्वक निरन्तर चिन्तन करना सबसे बढ़कर है। अतएव नाना प्रकारके कर्मोंके बाहुल्यके कारण उनके चिन्तनमें एक क्षणकी भी बाधा न आये, इसके लिये विशेष सावधान रहना चाहिये। यदि अनन्य प्रेमकी प्रगाढ़ताके कारण शास्त्रानुकूल कर्मोंके करनेमें कहीं कमी आती हो तो कोई हर्ज नहीं, किंतु प्रेममें बाधा नहीं पड़नी चाहिये; क्योंकि जहाँ अनन्य प्रेम है, वहाँ भगवान्का चिन्तन (ध्यान) तो निरन्तर होता ही है और उस ध्यानके प्रभावसे पद-पदपर भगवान्की दयाका अनुभव करता हुआ मनुष्य भगवान् सदाशिवके तत्त्वको यथार्थरूपसे समझकर कृतकृत्य हो जाता है, अर्थात् परमपदको प्राप्त हो जाता है। अतएव भगवान् शिवके प्रेम और प्रभावको समझकर उनके स्वरूपका निष्काम प्रेमभावसे निरन्तर चिन्तन होनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा करनी चाहिये। [समाप्त]

भला पड़ोसी कौन ?—एक शोध

(पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)

किसीने एक संतसे पूछा—‘परमेश्वरकी सबसे बड़ी आज्ञा क्या है?’

संत बोले—‘पहली आज्ञा तो यह है कि तू अपने पूरे मन, प्राण और बुद्धिसे परमेश्वरसे प्रेम कर। दूसरी यह कि तू अपने पड़ोसीसे अपने समान ही प्रेम कर।’

‘पड़ोसीसे अपने समान ही प्रेम कर!’ कितनी सीधी और सरल बात! पर करनेमें कितनी टेढ़ी!

× × ×

पड़ोसी हो जाना एक बात है, पड़ोसी बनना बिलकुल दूसरी बात है। मकानकी दीवालका मिला होना इस बातका सूचक नहीं कि इधरके और उधरके पड़ोसीका हृदय भी मिला हुआ है। हृदय मिला हो तो सारा विश्व अपना पड़ोसी है। फिर कोई दो कदमपर रहता हो या दो कोसपर। दिल्लीमें रहता हो या वाराणसीमें, कलकत्तामें रहता हो, चाहे लन्दन या न्यूयार्कमें।

पड़ोसी तो वह, जिसका दिल मिला हो। पड़ोसी तो वह, जो पड़ोसीके दुःख-दर्दको अपना दुःख-दर्द मानता हो और मानकर ही न रह जाता हो, उसे दूर करनेके लिये जी-जानसे प्रयत्न भी करता हो।

× × ×

‘भला पड़ोसी कौन तथा कौन-कौन-से गुण होते हैं भले पड़ोसीमें?’

आजसे लगभग पैंसठ साल पहले प्रसिद्ध समाजशास्त्री पिलरिम सोरोकिनके तत्त्वावधानमें अमेरिकामें अपने पड़ोसियोंसे प्रेम करनेवाले व्यक्तियोंका जो शोध हुआ,* उसमें उनसे पूछे गये अनेकों प्रश्नोंमेंसे यह भी एक प्रश्न था। भले पड़ोसी होनेके नाते वे अवश्य ही अधिकारी थे इस प्रश्नका उत्तर देनेके।

× × ×

अमेरिकामें भिन्न-भिन्न देशोंसे आकर लोग बस गये और अब सब मिलकर ‘अमरीकन’ कहलाते हैं। शोधके पात्रोंमें भी विभिन्न देशोंका प्रतिनिधित्व था।

उनमें इंग्लैण्ड, आयरलैण्ड और स्कॉटलैण्डके मूल निवासी भी थे तथा रूस और इटलीके भी। डच बेलजियन, स्कैण्डेनेवियन, जर्मन, फ्रांसीसी, चैक, स्विस्, रूमानियन, हंगेरियन, फिनिश, कनाडियन आदि भी थे।

चुने हुए ७११ भले पड़ोसियोंमें ७४ प्रतिशत देहातमें पैदा हुए थे, २६ प्रतिशत नगरोंमें। धर्मकी दृष्टिसे ९८ प्रतिशत आस्तिक थे, २ प्रतिशत नास्तिक। ६१ प्रतिशत लोग कभी-कभी अपने धर्मस्थल—चर्चमें चले जाते थे, ९ प्रतिशत कभी नहीं जाते थे। हाँ, ३० प्रतिशत नियमित रूपसे चर्च जाते थे। अपनेको खुल्लमखुल्ला ‘नास्तिक’ कहनेवालोंमें भी प्रेम और करुणाकी भावना कम न थी। ऐसी ही एक महिलाके उद्गार थे—‘मैं तो केवल एक बात जानती हूँ कि मैं जब किसी व्यक्तिको विपत्तिमें फँसा देखती हूँ तो मुझसे उसका दुःख-दर्द देखा नहीं जाता। मैं रह नहीं सकती उसकी भरसक सेवा किये बिना।’

इन भले पड़ोसियोंमें तीन चौथाईसे कुछ अधिक थीं महिलाएँ। पुरुषोंकी संख्या २३ प्रतिशतसे भी कम थी। अमेरिकन पुरुषवर्ग रात-दिन अपने काम-धंधेमें ही जुटा रहता है। सेवा-सहायताका अधिकांश कार्य महिलाएँ ही करती हैं, विशेषतः गृहिणियाँ।

इन भले पड़ोसियोंमें सबसे अधिक मात्रा थी मध्यम श्रेणीवालोंकी, उनसे कम निम्न श्रेणीवालोंकी और उच्च श्रेणीवालोंकी सबसे कम। आमदनीकी दृष्टिसे तीन चौथाईकी आमदनी ३ हजारसे १० हजार डालरतक थी। लगभग १० प्रतिशतकी आमदनी इनसे अधिक थी, शेषकी इनसे कम। व्यवसायकी दृष्टिसे सम्पन्न गृहिणियोंके अतिरिक्त एक तिहाई लोग सरकारी, गैर सरकारी सेवाओंमें थे—कोई शिक्षणमें, कोई स्वास्थ्यमें। १० प्रतिशत व्यापारी थे, ५ प्रतिशतके लगभग किरानी बाबू थे और ५ प्रतिशत किसान तथा ५ प्रतिशत मजदूर थे। स्नातकोत्तर शिक्षणवाले १० प्रतिशत थे, अधिकांश हाई स्कूल या कॉलेजके छात्र रह चुके थे, एक चौथाई प्राइमरीतक ही

पड़ोसमें आग लगे तो हम भी उसकी लपटसे बच नहीं सकते। पड़ोसमें महामारी फैले तो हम भी उसकी चपेटमें आये बिना रह नहीं सकते। पड़ोसमें बाढ़ आये तो उसके प्रवाहमें पड़े बिना हमारी मुक्ति नहीं। पड़ोसमें

न रखो, १६. किसीसे भी छल-कपट न करो, १७. दिखावटी संधि न करो, १८. उदारता न छोड़ो, १९. बुराईके बदले बुराई न करो, २०. किसीके साथ अत्याचार न करो, २१. तुम्हारे साथ कोई अत्याचार करे तो शान्तिपूर्वक सह लो, २२. शत्रुसे भी प्यार करो, २३. गालीके बदले आशीर्वाद दो, २४. किसीकी निन्दा न करो, २५. किसी व्यक्तिसे घृणा न करो, २६. किसीसे ईर्ष्या मत करो, २७. लड़ाई-झगड़ेमें रस न लो, २८. बड़ोंका आदर करो, २९. छोटोंसे प्यार करो, ३०. शत्रुओंका भला मनाओ और दिन डूबनेसे पहले ही विरोधीसे क्षमा माँगकर सन्धि कर लो।

कैसे उत्तम सत्कार्य!

पतंजलिकी, भगवान् बुद्धकी—मैत्री, करुणा और मुदिताकी भावनाका विस्तार।

× × ×

संत बासिल कहते हैं—‘प्रेमके दो रूप हैं—१.
प्रेमास्पदको चोट लगी हो तो उसके दुःखमें दुखी होना
और २. प्रेमास्पदके सुखमें सुखी होना और उसे सुख
पहुँचाना।’

पड़ोसीसे प्रेमका अर्थ है—पड़ोसीके दुःखमें दुखी होना। ऐसा कोई काम न करना, जिससे उसे दुःख हो। उसे हर तरहसे सुख पहुँचाना। वह बुराई भी करे तो उसके बदलेमें भलाई करना। गाली दे तो भी उसे आशीर्वाद देना।

लाख दुष्ट हो, लाख बुरा हो हमारा पड़ोसी, हमें
उसे जीतना है प्रेमसे ही।

× × ×

यदि कोई कहता है कि 'मैं ईश्वरसे प्रेम करता हूँ', और अपने भाईसे वैर करता है तो वह झूठा है। कारण, जो अपने भाईसे, जिसे उसने देखा है, प्रेम नहीं करता, वह उस ईश्वरसे कैसे प्रेम कर सकता है, जिसे उसने देखा ही नहीं।

याद रखनेकी बात है—

यह तो घर है प्रेमका खालाका घर नाहिं।

सीस उतारे भुङ्ग धरे तब पैठे या माहिं ॥

मौन-व्याख्यान

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

उपदेशकका पद वस्तुतः बहुत ही दायित्वपूर्ण है। अनुभवही पुरुष ही दूसरोंको उपदेश करनेका अधिकारी होता है। जबतक साधना करते-करते किसी विषयमें सिद्धि प्राप्त नहीं हो जाती, तबतक उस विषयका उपदेशक बनना अपने और दूसरोंके साथ ठगी करना है। और इसी कारण उपदेशका प्रभाव नहीं पड़ता। खास करके पारमार्थिक विषयमें तो उपदेशक बनना बहुत ही कठिन है। उपदेशकमें निम्नलिखित पाँच बातें अवश्य ही होनी चाहिये। १—जिस विषयका उपदेश करे, उसका पारदर्शी हो; २—जिस साधनाका उपदेश करे, उसको स्वयं करनेवाला हो; ३—उपदेशमें धन, मान, पूजा आदिकी प्राप्तिके रूपमें अपना किंचित् भी स्वार्थ न हो; ४—जिस विषयका उपदेश करे, वह विषय परिणाममें सबके लिये कल्याणकारक हो और ५—उपदेशमें किसी प्रकारका भी दम्भाचरण न हो। जिस उपदेशकमें ये पाँचों बातें होती हैं, उसके उपदेशका बड़ा प्रभाव पड़ता है। यद्यपि आकर्षक भाषा, शब्दसौन्दर्य और यथायोग्य भावोंका प्रदर्शन आदि साधन श्रोताओंके चित्तको खींचनेमें बहुत सहायक होते हैं, परंतु ये सब व्याख्यान-कलाकी चीजें हैं। कलाके साथ हृदयके परम शुद्ध और कल्याणकारक भावोंका संयोग हो, तभी उस कलासे विशेष लोकोपकार होता है। जो कला केवल कलाके लिये होती है अथवा जिस कलाके प्रदर्शनमें कुवासनाओंके उत्पादक और वर्द्धक दूषित भावोंका संयोग होता है, वह कला समाजके लिये कभी हितकर नहीं हो सकती, चाहे वह कितनी ही विकसित और आकर्षक क्यों न हो। इसके विपरीत जिस अनुभवपूर्ण वाणीमें सत्य, प्रेम, सरलता और निःस्वार्थ लोकसेवाकी भावना होती है, वह कलाकी दृष्टिसे आकर्षक न होनेपर भी समाजके लिये अत्यन्त कल्याणकारिणी होती है। उपदेशकमें उपर्युक्त पाँच गुणोंके साथ वाग्मतिकी कला भी हो तो वह

सोनेमें सुगन्धके समान है और ऐसा उपदेशक जगत्की बहुत सेवा कर सकता है। परंतु यह बात ध्यानमें रहनी चाहिये कि जबतक मनुष्यके मनमें आत्मसुधारकी प्रबल आकांक्षा नहीं है—और आत्म-संशोधन और आत्मोत्थानके लिये प्राणपणसे प्रयत्न नहीं किया जाता, तबतक उपदेशक बनना विडम्बनामात्र है।

सच्ची बात तो यह है कि जिनमें उपदेश देनेके योग्य सदगुण हैं, उनको भी उपदेशक बननेकी इच्छा नहीं होनी चाहिये। जबतक ऐसी इच्छा है, तबतक कुछ-न-कुछ दुर्बलता मनमें छिपी है। महापुरुषोंके आचरण ही आदर्श सत्कर्म और उनके स्वाभाविक वचन ही उपदेश होते हैं। वे वस्तुतः न तो उपदेशक बनते हैं और न कहलाते हैं। उनकी करनी-कहनीसे अपने-आप ही जगत्को उपदेश मिलता है, और इस सच्चे उपदेशका क्षेत्र आरम्भमें बहुत विस्तृत न होनेपर भी इसका जो कुछ प्रभाव होता है, वह बहुत ही ठोस, स्थायी और आगे चलकर बहुत ही व्यापक हो जाता है। उपदेश देनेकी तो इच्छा ही मनमें न होनी चाहिये। अपने शरीर-मन-वाणीसे होनेवाली क्रियाओंमें भी यह भाव न रहे कि इन्हें देखकर लोग इनसे शिक्षा ग्रहण करें। ऐसी चेष्टा करे, जिसमें स्वाभाविक ही सब क्रियाएँ सत्यके आधारपर हों और निर्मल हों, निरन्तर इस बातको देखता रहे कि मेरे अन्दर सत्त्वगुण बढ़ रहा है या नहीं। यदि सत्त्वगुण बढ़ गया तो रज और तम अपने-आप ही दब जायँगे। सत्त्वकी शक्ति बड़ी प्रबल होती है। जिसके हृदयमें शुद्ध सत्त्वभाव है और जिसकी क्रियाओंमें सत्त्वगुणकी प्रबलता है, उसके द्वारा जो कुछ होता है, सभी लोककल्याणकारी होता है। वह जहाँ निवास करता है, वहाँका वातावरण शुद्ध होता है। वातावरणकी शुद्धिसे परमाणुओंमें शुद्धि आती है और वे परमाणु जहाँतक फैलते हैं, जिसके साथ

जिते हैं, वही शुद्ध करते हैं।

MADE WITH LOVE BY Avinash/Sharma

शिष्यकी श्रद्धाके प्रतापसे कहीं-कहीं अयोग्य गुरुसे भी लाभ हो जाता है, परंतु इसमें शिष्यकी श्रद्धा ही कारण होती है, जिसके कारण वह उस लाभमें अपनी श्रद्धाको कारण न समझकर गुरुकृपाको ही कारण मानता है। परंतु गुरु बननेवालेको ऐसे अवसरोंपर सावधान रहना चाहिये और शिष्यकी श्रद्धासे अनुचित लाभ उठानेकी चेष्टा करके अपनेको ठगना नहीं चाहिये।

सहजमें यह दुःखद संवाद कहते नहीं बना। अन्तमें एक भक्तने कहा, 'प्रभो! श्रीवासका पुत्र जाता रहा।' प्रभुने कहा 'कब? कितनी देर हुई?' भक्तोंने कहा, 'रातको आठ बजे यह घटना हुई थी, इस समय करीब दो बज गये हैं।' यह सुनकर श्रीगौरांग श्रीवासकी ओर देखने लगे, श्रीवासका मुख महान् आनन्दसे प्रफुल्लित हो रहा है, महाप्रभु श्रीवासका यह भाव देखकर बहुत प्रसन्न हुए, उन्होंने कहा—

‘धन्य धन्य श्रीवास! आज तुमने श्रीकृष्णको खरीद लिया।’

महाप्रभुका हृदय द्रवित हो गया, नेत्रोंसे अश्रुधारा बहने लगी, प्रभुकी आँखोंमें आँसू देखकर श्रीवासने कहा, 'प्रभो! मैं पुत्रशोक सहन कर सकता हूँ, परंतु आपके नेत्रोंमें जल नहीं देख सकता, आप शान्त हों, मुझे कोई दुःख नहीं है—दुःखकी सम्भावना भी नहीं है।’

भक्तोंने मृत बालककी लाशको बाहर आँगनमें सुला दिया, महाप्रभु उसके पास जाकर उससे जीवितकी तरह पूछने लगे, प्रभुके प्रश्न करते ही मृतदेहमें प्राणोंका

संचार हो गया, बालक बोलने लगा। इस आश्चर्यमयी घटनासे सभी लोग चकित हो गये। बालकने कहा, 'प्रभो! इस जगत्में मेरा काम पूरा हो गया, अब मैं इससे बहुत अच्छी जगह जा रहा हूँ, आप कृपा करें, जिससे भगवच्चरणोंमें मेरी मति हो।' इसके बाद ही शरीर पुनः निर्जीव हो गया!

पुत्रकी बोली सुनकर माताका शोक कुछ कम हुआ, महाप्रभुके समझानेसे सभी शोक भूल गये। प्रभु कहने लगे, 'श्रीवास! जब संसारमें आये हो, तब तुम्हें भी सांसारिक नियमोंके अधीन ही रहना होगा। परंतु दूसरे लोग इससे कठिन नियमोंको क्लेशसे सहते हैं, तुम क्लेशसे मुक्त हो। पर यह न समझो कि तुम्हारा पुत्र जाता रहा है, उस एक्के बदलेमें श्रीनित्यानन्द और मुझको दोनोंको तुम अपने पुत्र समझो!’

प्रभुके इन वचनोंसे श्रीवास और उनकी पत्नीका हृदय आनन्दसे भर गया। वे गद्गद होकर हरिध्वनि करने लगे। भक्तगण मृतदेहको संस्कारके लिये ले गये। सबका शोक—दुःख जाता रहा।

जीवन-दर्शन

एमरसन अमेरिकाके महान् दार्शनिक और विचारक थे। वे अपने समयके बहुत बड़े तत्त्वज्ञ थे। उनका सम्पूर्ण जीवन अन्तरात्मा-परमात्माके चरणोंपर समर्पित था। वे कहा करते थे कि परमात्मासे ही सम्बन्ध रखना चाहिये। उनके चिन्तनसे जीवन अमृतमय हो उठता है। संसारकी वस्तुएँ नश्वर और क्षणभंगुर हैं। इनका विश्वास नहीं करना चाहिये।

एक दिन वे एकान्तमें बैठकर ईश्वरका चिन्तन कर रहे थे कि अचानक एक मित्रने उनकी परीक्षा ली। मित्रने अपने-आपको विशेष चिन्तासे संतप्त प्रकट किया।

‘कुछ कहोगे भी कि क्या बात है। तुम्हारी चिन्ताका कारण मैं भी तो जानूँ।’ एमरसन अपने मित्रकी ओर देखने लगे।

‘भाई! कुछ मत पूछो। हमलोगोंके भाग्यमें ऐसा ही होना था। क्या आप जानते नहीं हैं कि आज रातको ही सम्पूर्ण संसार कालके गालमें समा जायगा। प्रलय उपस्थित है।’ मित्र विस्मित था।

एमरसनके मनमें आनन्द थिरक उठा। वे इस समाचारसे बहुत प्रसन्न दीख पड़े।

‘मित्र! आपने बड़ी अच्छी बात बतायी। इससे बढ़कर शुभ समाचार दूसरा हो ही क्या सकता है? इस संसारके बिना भी मनुष्य बड़े आराम और सुखसे रह सकता है। ईश्वरीय राज्य आयेगा और मनुष्य अपने क्षणभंगुर जीवनमें सच्ची शान्ति और वास्तविक सत्यका अनुभव करेगा।’ एमरसनने धन्यवाद दिया, वे निश्चित थे।

साधकोंके प्रति—

[दृढ़ निश्चयकी महिमा]

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

मैंने सन्तोंसे सुना है कि 'परमात्मा हैं'—ऐसा दृढ़ निश्चय हो जाय तो अपने-आपको जनानेकी जिम्मेदारी भगवान्पर आ जाती है। हम भगवान्को अपने उद्योगसे नहीं जान सकते, पर 'भगवान् सब जगह हैं'—यह दृढ़ भाव होनेपर भगवान् खुद अपने-आपको जना देते हैं।

भगवान् सब जगह हैं—यह बात हमें जँची हुई है ही, फिर इसमें कमी क्या है? इसमें एक बातकी कमी है कि हम जानते हैं कि यह संसार पहले ऐसा नहीं था और फिर ऐसा नहीं रहेगा तथा अभी भी हरदम बदल रहा है, फिर भी संसारको 'है' मान लेते हैं अर्थात् अपने इस अनुभवका निरादर करते हैं। इस कारण 'परमात्मा हैं'—इस मान्यताकी दृढ़तामें कमी आ रही है। इसलिये अपने अनुभवका आदर करें।

जैसे, जबतक नींद नहीं आती, तबतक स्वप्न नहीं आता और नींद खुलनेके बाद भी स्वप्न नहीं रहता, बीचमें (नींदमें) स्वप्न आता है। बीचमें भी आप उसको सच्चा मान लेते हो, नहीं तो वह है ही नहीं। इसी तरह संसारको मान लें कि यह संसार, शरीर पहले भी नहीं थे, पीछे भी नहीं रहेंगे, बीचमें भी केवल दीखते हैं, वास्तवमें हैं नहीं। अब कोई कहे कि संसार, शरीर आदि प्रत्यक्ष दीखते हैं, इनको 'नहीं' कैसे मानें? तो भाई! स्वप्न दीखनेमें कम सच्चा थोड़े ही दीखता था। जब दीखता था, तब ठीक सच्चा ही दीखता था, परंतु जगनेपर स्वप्न नहीं दीखता। इससे सिद्ध हुआ कि वह था ही नहीं। आजसे सौ वर्ष पहले ये शरीर थे क्या? और सौ वर्षके बाद ये शरीर रहेंगे क्या? हरेक आदमी मान लेगा कि बिलकुल नहीं रहेंगे। 'आदावन्ते च यन्नास्ति वर्तमानेऽपि तत्तथा' अर्थात् जो आदि और अन्तमें नहीं होता, वह वर्तमानमें भी नहीं होता। इस दृष्टिसे यह सब-का-सब निरन्तर 'नहीं' में भरती हो रहा है। जितनी उम्र बीत गयी, उतनी तो 'नहीं' में भरती हो ही गयी। अब जितनी उम्र बाकी रही, वह भी प्रतिक्षण 'नहीं' में भरती हो रही है। यह

सब संसार प्रतिक्षण अभावमें जा रहा है। जितना जन्म है, वह प्रतिक्षण मृत्युमें जा रहा है। जितना सर्ग है, वह प्रतिक्षण प्रलयमें जा रहा है। जितना महासर्ग है, वह प्रतिक्षण महाप्रलयमें जा रहा है।

इस संसारको नाशवान् कहते हैं। जैसे धनके कारण मनुष्य धनवान् कहलाता है। अगर धन नहीं हो तो वह धनवान् नहीं कहलाता, ऐसे ही संसार नाशवान् कहलाता है तो इसमें नाशके सिवाय कुछ नहीं है, नाश-ही-नाश है। अगर 'परमात्मा हैं'—यह दृढ़ निश्चय हो जाय तो जो 'नहीं' को 'है' माना है, वह आड़ हट जायगी और परमात्मा प्रकट हो जायँगे! कारण कि परमात्मा तो हैं ही, उनका कभी अभाव नहीं होता। परमात्मा सब जगह होनेसे यहाँ भी हैं, सब समयमें होनेसे अभी भी हैं, सबमें होनेसे अपनेमें भी हैं और सबके होनेसे हमारे भी हैं। उनका अभाव कभी हो नहीं सकता, कभी हुआ नहीं, जब कि संसारमात्रका अभाव प्रतिक्षण हो रहा है। दो ही तो चीजें हैं—परमात्मा और संसार। परमात्माका तो अभाव नहीं हो सकता और संसारका भाव नहीं हो सकता—ऐसा यथार्थ दृष्टिसे दृढ़तापूर्वक जानते ही संसारकी जगह परमात्मा दीखने लग जायँगे। अभी भी परमात्मा ही दीखते हैं; क्योंकि संसारकी तो सत्ता ही नहीं है। परमात्माकी सत्तासे ही यह संसार सत्य दीख रहा है। इसमें सत्य तो एक परमात्मा ही हैं। तो फिर यह संसार सत्य क्यों दीखता है? 'जासु सत्यता तें जड़ माया। भास सत्य इव मोह सहाया॥' (रा०च०मा० १।११७।८) मूर्खतासे ही यह संसार सत्य दीखता है। जो जानता है, पर मानता नहीं, उसे मूर्ख कहते हैं। जानता है कि यह संसार नाशवान् है फिर भी इसको स्थिर मानता है—यही मूर्खता है। हम जितना जानते हैं, उतना मान लें तो मूर्खता नहीं रहेगी और हम निहाल हो जायँगे।

परमात्माको तो मान लें और संसारको जान लें।

संसारको कैसे मानें? कि परमात्मा तो हैं; और संसारको कैसे जानें? कि संसार नहीं है। संसारको ठीक जान लेनेपर परमात्मा प्रकट हो जाते हैं। 'यह बात ठीक दीखती है, तो फिर जँचती क्यों नहीं?' इसमें कारण यह है कि संसारसे सुख लेते हो। जबतक सांसारिक सुखका लोभ रहेगा, तबतक यह 'संसार नाशवान् है, असत्य है'—ऐसा कहनेपर भी दीखेगा नहीं।

काला भौरा बाँसमें छेद करके रहता है। बाँस कितना कड़ा होता है, पर भौराके दाँत इतने कठोर होते हैं कि उसमें भी गोल-गोल छेद कर देता है! परंतु जब वह कमलके भीतर बैठता है, तब रातमें कमलके बन्द होनेपर भी वह उसे काटकर बाहर नहीं जाता। वह सोचता है कि रात चली जायगी, प्रभात हो जायगा, सूर्यका उदय हो जायगा, तब कमल खिल जायगा और उस समय मैं उड़ जाऊँगा। वह बाँसमें छेद कर देता है, पर कमलकी पंखुड़ी उससे नहीं कटती। क्या वह इतना कमजोर है? वह उस कमलसे सुख लेता है, इसलिये कमजोर हो जाता है! ऐसे ही यह मनुष्य संसारसे सुख लेता है, इसलिये यह कमजोर हो जाता है। बीकानेरकी बोलीमें एक बात आती है—'रांडरा काचा' अर्थात् स्त्रीके आगे बिलकुल कच्चा, स्त्रीका गुलाम। इस संसाररूपी स्त्रीके आगे यह मनुष्य कच्चा, कमजोर हो जाता है। कच्चापन क्या है? संसारसे सुख लेता है, यही कच्चापन है। इस कच्चापनको दूर करना है।

'परमात्मा हैं'—यह तो मान्यता है और 'संसार

नाशवान् है'—यह प्रत्यक्ष है। संसारको ठीक जान लो तो परमात्मा प्रकट हो जायँगे, इतनी-सी बात है। थोड़ी देर बैठकर इस बातको जमा लो कि बाहर-भीतर ऊपर-नीचे सब जगह परमात्मा ही हैं। जैसे समुद्रमें गोता लगानेपर चारों तरफ जल-ही-जल है, ऐसे ही सब जगह परमात्मा-ही-परमात्मा हैं। संसार तो बेचारा यों ही नष्ट हो रहा है!

प्रश्न यह है कि संसारका सुख लेना कैसे मिटे? तो इसको अपनी कच्चाई समझें तो यह मिट जायगा। इसको तो आप मिटायेंगे, तभी मिटेगा। दूसरा नहीं मिटा सकता। अतः आप अपना पूरा बल लगायें। फिर भी न मिटे तो 'हे नाथ! हे नाथ!' कहकर भगवान्को पुकारें। यह नियम है कि जब आदमी निर्बल हो जाता है, तब वह सबलका सहारा लेता ही है। एक तो सांसारिक सुखासक्तिको मिटानेकी चाहना नहीं है और एक हम उसको मिटाते नहीं हैं, ये दो बाधाएँ हैं। ये दोनों बाधाएँ हट जायँ, फिर भी सुखासक्ति न मिटे तो उस समय आप स्वतः परमात्माको पुकार उठोगे। बालककी भी मनचाही नहीं होती तो वह रो पड़ता है और रोनेसे सब काम हो जाता है। ऐसे ही सज्जनो! उस प्रभुके आगे रो पड़ो तो सब काम हो जायगा। वे प्रभु सर्वथा सबल हैं। उनके रहते हम दुःख क्यों पायें? भगवान् हमारे हैं। बालक कहता है कि माँ मेरी है, तो माँको उसे गोदमें लेना पड़ेगा। वह तो केवल एक जन्मकी माँ है; परंतु वे प्रभु सदाकी और सबकी माँ हैं।

शिवसे विनय

(श्रीचन्द्रशेखरजी शुक्ल)

हमको अपना कर लो शंकर॥

हम तुम्हरे हैं जनम-जनम के।

इसकी हामी भर लो शंकर॥

हमको अपना कर लो शंकर॥

बहते हैं भवसिन्धु बीच हम।

बाँह हमारी धर लो शंकर॥

हमको अपना कर लो शंकर॥

रहें नहीं तिलमात्र शेष अब।

दोष हमारे हर लो शंकर॥

हमको अपना कर लो शंकर॥

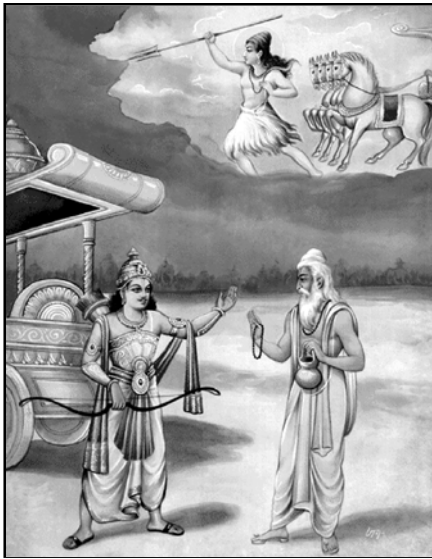
निकलो नहीं निकाले कबहूँ।

'शुक्ल' हिये कर घर लो शंकर॥

[प्रेषक—श्रीरविन्द्रजी अग्रवाल]

महाभारतोक्त शतरुद्रियस्तोत्र

[वैदिक शिवोपासनार्थं वेदोक्त शतरुद्रियका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। शतरुद्रिय चारों वेदोंमें भिन्न-भिन्न रूपोंमें प्राप्त होते हैं। शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टाध्यायीका मुख्य भाग शतरुद्रिय ही है, जो उसमें पंचम अध्यायके रूपमें विन्यस्त है। वस्तुतः माध्यन्दिनशाखीय शुक्ल यजुर्वेदका यह १६वाँ अध्याय है। इसे रुद्रसूक्त अथवा नीलसूक्त भी कहते हैं। इसमें भगवान् शिवकी शताधिक नामोंसे स्तुति की गयी है। उपर्युक्त वैदिक शतरुद्रियका अपरिमित एवं अमोघ माहात्म्य है, परन्तु शास्त्रानुसार जिनका वैदिक पूजनमें अधिकार नहीं है, उनके लिये भी इतिहास-पुराणग्रन्थोंमें अनेक वैकल्पिक साधन बताये गये हैं। उसी क्रममें पौराणिक शतरुद्रिय भी एकाधिक स्थलोंपर उक्त ग्रन्थोंमें दिये गये हैं। उनका महत्त्व किसी भी प्रकारसे न्यून नहीं है, यह उनकी फलश्रुतिसे स्पष्ट हो जाता है। एक पौराणिक शतरुद्रियस्तोत्र स्कन्दपुराणके माहेश्वरखण्डके कुमारिका उपखण्डके अन्तर्गत प्राप्त होता है, दूसरा महाभारतके द्रोणपर्व के अन्तर्गत दो अध्यायोंमें विन्यस्त है। अन्यान्य पुराणोंमें भी ऐसे स्तोत्रोंका अनुसन्धान किया जा सकता है। महाभारतोक्त शतरुद्रियका उपदेश पाण्डुपुत्र अर्जुनको स्वयं महर्षि वेदव्यासने दिया था, जिसका भक्तिभावसे सभी पाठ कर सकते हैं, उसी महाभारतोक्त शतरुद्रियको यहाँ सानुवाद प्रस्तुत किया जा रहा है—सम्पादक]



रुद्राय शितिकण्ठाय कनिष्ठाय सुवर्चसे ।
 कपर्दिने करालाय हर्यक्षवरदाय च ॥ १ ॥
 याम्यायाव्यक्तकेशाय सदवृत्ते शङ्कराय च ।
 काम्याय हरिनेत्राय स्थाणवे पुरुषाय च ॥ २ ॥
 हरिकेशाय मुण्डाय कृशायोत्तारणाय च ।
 भास्कराय सुतीर्थाय देवदेवाय रंहसे ॥ ३ ॥
 बहुरूपाय सर्वाय प्रियाय प्रियवाससे ।
 उष्णीषिणे सुवक्त्राय सहस्राक्षाय मीढुषे ॥ ४ ॥
 गिरिषाय प्रशान्ताय यतये चीरवाससे ।
 हिरण्यबाहवे राज्ञे उग्राय पतये दिशाम् ॥ ५ ॥

जो रुद्र, नीलकण्ठ, कनिष्ठ (सूक्ष्म या दीप्तिमान्), उत्तम तेजसे सम्पन्न, जटाजूटधारी, विकरालस्वरूप, पिंगल नेत्रवाले कुबेरको वर देनेवाले हैं, उन भगवान् शिवको नमस्कार है ॥ १ ॥

जो यमके अनुकूल रहनेवाले काल हैं, अव्यक्त स्वरूप आकाश ही जिनका केश है, जो सदाचारसम्पन्न, सबका कल्याण करनेवाले, कमनीय, पिंगलनेत्र, सदा स्थित रहनेवाले और अन्तर्यामी पुरुष हैं, जिनके केश भूरे एवं पिंगल वर्णके हैं, जिनका मस्तक मुण्डित है, जो दुबले-पतले और भवसागरसे पार उतारनेवाले हैं, जो सूर्यस्वरूप, उत्तम तीर्थ और अत्यन्त वेगशाली हैं, उन देवाधिदेव महादेवको नमस्कार है ॥ २-३ ॥

जो अनेक रूप धारण करनेवाले, सर्वस्वरूप तथा सबके प्रिय हैं, वल्कल आदि वस्त्र जिन्हें प्रिय हैं, जो मस्तकपर पगड़ी धारण करते हैं, जिनका मुख सुन्दर है, जिनके सहस्रों नेत्र हैं तथा जो वर्षा करनेवाले हैं, उन भगवान् शंकरको नमस्कार है ॥ ४ ॥

जो पर्वतपर शयन करनेवाले, परम शान्त, यतिस्वरूप, चीरवस्त्रधारी, हिरण्यबाहु (सोनेके आभूषणोंसे विभूषित बाँहवाले), राजा (दीप्तिमान्), उग्र (भयंकर) तथा दिशाओंके अधिपति हैं, [उन भगवान् शङ्करको नमस्कार है] ॥ ५ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

पर्जन्यपतये चैव भूतानां पतये नमः ।
वृक्षाणां पतये चैव गवां च पतये नमः ॥ ६ ॥

वृक्षैरावृतकायाय सेनान्ये मध्यमाय च ।
स्रुवहस्ताय देवाय धन्विने भार्गवाय च ॥ ७ ॥

बहुरूपाय विश्वस्य पतये मुञ्जवाससे ।
सहस्रशिरसे चैव सहस्रनयनाय च ॥ ८ ॥

सहस्रबाहवे चैव सहस्रचरणाय च ।
शरणं गच्छ कौन्तेय वरदं भुवनेश्वरम् ॥ ९ ॥

उमापतिं विरूपाक्षं दक्षयज्ञनिबर्हणम् ।
प्रजानां पतिमव्यग्रं भूतानां पतिमव्ययम् ॥ १० ॥

कपर्दिनं वृषावर्तं वृषनाभं वृषध्वजम् ।
वृषदर्पं वृषपतिं वृषशृङ्गं वृषर्षभम् ॥ ११ ॥

वृषाङ्कं वृषभोदारं वृषभं वृषभेक्षणम् ।
वृषायुधं वृषशरं वृषभतं वृषेश्वरम् ॥ १२ ॥

महोदरं महाकायं द्वीपिचर्मनिवासिनम् ।
लोकेशं वरदं मण्डं ब्रह्माण्यं ब्राह्मणप्रियम् ॥ १३ ॥

त्रिशूलपाणिं वरदं खड्गचर्मधरं प्रभुम् ।
पिनाकिनं खड्गधरं लोकानां पतिमीश्वरम् ॥ १४ ॥

जो मेघोंके अधिपति तथा सम्पूर्ण भूतोंके स्वामी हैं,
उन्हें नमस्कार है। वृक्षोंके पालक और गौओंके अधिपतिरूप
आपको नमस्कार है ॥ ६ ॥

जिनका शरीर वृक्षोंसे आच्छादित है, जो सेनाके अधिपति और शरीरके मध्यवर्ती (अन्तर्यामी) हैं, यजमान-रूपसे जो अपने हाथमें सुवा धारण करते हैं, जो दिव्यस्वरूप, धनुर्धर और भृगुवंशी परशुरामस्वरूप हैं, उनको नमस्कार है ॥ ७ ॥

जिनके बहुत-से रूप हैं, जो इस विश्वके पालक होकर भी मूँजका कौपीन धारण करते हैं, जिनके सहस्रों सिर, सहस्रों नेत्र, सहस्रों भुजाएँ और सहस्रों पैर हैं, उन भगवान् शङ्करको नमस्कार है ॥ ८^१/_२ ॥

कुन्तीनन्दन! तुम उन्हीं वरदायक, भुवनेश्वर,
उमावल्लभ, त्रिनेत्रधारी, दक्षयज्ञविनाशक, प्रजापति,
व्यग्रतारहित और अविनाशी भगवान् भूतनाथकी शरणमें
जाओ ॥ ९-१० ॥

जो जटाजूटधारी हैं, जिनका घूमना परम श्रेष्ठ है, जो श्रेष्ठ नाभिसे सुशोभित, ध्वजापर वृषभका चिह्न धारण करनेवाले, वृषदर्प (प्रबल अहंकारवाले), वृषपति (धर्मस्वरूप वृषभके अधिपति), धर्मको ही उच्चतम माननेवाले तथा धर्मसे भी सर्वश्रेष्ठ हैं, जिनके ध्वजमें साँड़का चिह्न अंकित है, जो धर्मात्माओंमें उदार, धर्मस्वरूप, वृषभके समान विशाल नेत्रोंवाले, श्रेष्ठ आयुध और श्रेष्ठ बाणसे युक्त, धर्मविग्रह तथा धर्मके ईश्वर हैं, [उन भगवान्‌की मैं शरण ग्रहण करता हूँ] ॥ ११-१२ ॥

कोटि-कोटि ब्रह्माण्डोंको धारण करनेके कारण जिनका उदर और शरीर विशाल है, जो व्याघ्रचर्म ओढ़ा करते हैं, जो लोकेश्वर, वरदायक, मुण्डितमस्तक, ब्राह्मणहितैषी तथा ब्राह्मणोंके प्रिय हैं। जिनके हाथमें त्रिशूल, ढाल, तलवार और पिनाक आदि अस्त्र शोभा पाते हैं, जो वरदायक, प्रभु, सुन्दर शरीरधारी, तीनों लोकोंके स्वामी तथा साक्षात् ईश्वर हैं, उन चीरवस्त्रधारी, शरणागतवत्सल भगवान् शिवकी मैं शरण लेता हूँ ॥ १९-१४ ॥

वेदज्ञ ब्राह्मण उनके दो शरीर मानते हैं, एक घोर और दूसरा शिव। ये दोनों पृथक्-पृथक् हैं और उन्हींसे पुनः बहुसंख्यक शरीर प्रकट हो जाते हैं ॥ २७ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

घोरा तु या तनुस्तस्य सोऽग्निर्विष्णुः स भास्करः ।
सौम्या तु पुनरेवास्य आपो ज्योतींषि चन्द्रमाः ॥ २८ ॥

वेदाः साङ्गोपनिषदः पुराणाध्यात्मनिश्चयाः ।
यदत्र परमं गुह्यं स वै देवो महेश्वरः ॥ २९ ॥

धन्यं यशस्यमायुष्यं पुण्यं वेदैश्च सम्मितम् ॥ ३० ॥

सर्वार्थसाधनं पुण्यं सर्वकिल्बिषनाशनम् ।
सर्वपापप्रशमनं सर्वदःखभयापहम् ॥ ३१ ॥

चतुर्विधमिदं स्तोत्रं यः शृणोति नरः सदा ।
विजित्य शत्रून् सर्वान् स रुद्रलोके महीयते ॥ ३२ ॥

चरितं महात्मनो नित्यं सांग्रामिकमिदं स्मृतम् ।
पठन् वै शतरूढीयं शृण्वंश्च सततोत्थितः ॥ ३३ ॥

भक्तो विश्वेश्वरं देवं मानुषेषु च यः सदा ।
वरान् कामान् स लभते प्रसन्ने त्र्यम्बके नरः ॥ ३४ ॥

उनका जो घोर शरीर है, वही अग्नि, विष्णु और सूर्य है और उनका सौम्य (शिव) शरीर ही जल, ग्रह, नक्षत्र और चन्द्रमा है ॥ २८ ॥

वेद, वेदांग, उपनिषद्, पुराण और अध्यात्मशास्त्रके जो सिद्धान्त हैं तथा उनमें भी जो परम रहस्य है, वह भगवान् महेश्वर ही हैं ॥ २९ ॥

पार्थ ! यह स्तोत्र वेदोंके समान परम पवित्र तथा धन, यश और आयुकी वृद्धि करनेवाला है ॥ ३० ॥

इसके पाठसे सम्पूर्ण मनोरथोंकी सिद्धि होती है। यह पवित्र स्तोत्र सम्पूर्ण किल्बिषोंका नाशक, सब पापोंका निवारक तथा सब प्रकारके दुःख और भयको दूर करनेवाला है ॥ ३१ ॥

जो मनुष्य भगवान् शंकरके ब्रह्मा, विष्णु, महेश और निर्गुण निराकार—इन चतुर्विध स्वरूपका प्रतिपादन करनेवाले इस स्तोत्रको सदा सुनता है, वह सम्पूर्ण शत्रुओंको जीतकर रुद्रलोकमें प्रतिष्ठित होता है ॥ ३२ ॥

परमात्मा शिवका यह चरित सदा संग्राममें विजय दिलानेवाला है, जो सदा उद्यत रहकर शतरुद्रियको पढ़ता और सुनता है तथा मनुष्योंमें जो कोई भी निरन्तर भगवान् विश्वेश्वरका भक्तिभावसे भजन करता है, वह उन त्रिलोचनके प्रसन्न होनेपर समस्त उत्तम कामनाओंको प्राप्त कर लेता है ॥ ३३-३४ ॥

॥ इति श्रीमहाभारते द्रोणपर्वणि व्यासप्रोक्तं शतरुद्रियस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

॥ इस प्रकार श्रीमहाभारतमें द्रोणपर्वके अन्तर्गत व्यासप्रोक्त शतरुद्रियस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

‘को जाँचिये संभु तजि आन’

- ❖ को जाँचिये संभु तजि आन।
- ❖ दीनदयालु भगत-आरति-हर, सब प्रकार समरथ भगवान॥
- ❖ कालकूट-जुर जरत सुरासुर, निज पन लागि किये बिष पान।
- ❖ दारुन दनुज, जगत-दुखदायक, मारेउ त्रिपुर एक ही बान॥
- ❖ जो गति अगम महामुनि दुर्लभ, कहत संत, श्रुति, सकल पुरान।
- ❖ सो गति मरन-काल अपने पुर, देत सदाशिव सबहिं समान॥
- ❖ सेवत सुलभ, उदार कलपतरु, पारबती-पति परम सुजान।
- ❖ देह काम-रिपु राम-चरन-रति, तुलसिदास कहैं कृपानिधान॥

[विनय-पत्रिका]

परमात्माके साथ है हमारा नित्य सम्बन्ध

(श्रीताराचन्दजी आहुजा)

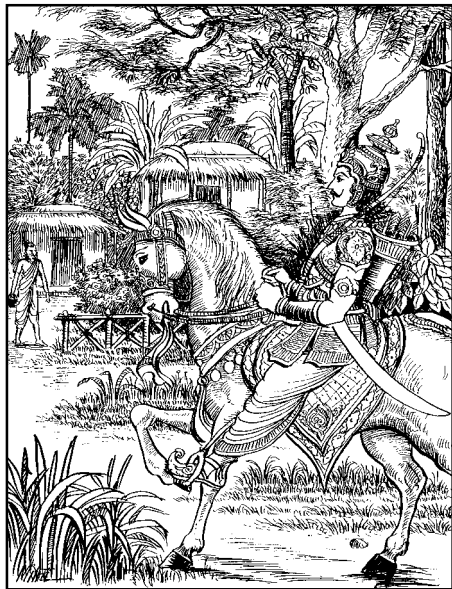
हमारे सम्बन्ध दो प्रकारके होते हैं—‘लौकिक’ और ‘अलौकिक’। लौकिक सम्बन्ध वे हैं, जो हमारे परिवार और संसारके साथ जुड़े होते हैं और अलौकिक सम्बन्ध केवल ईश्वरके साथ होता है। जहाँ हमारे सभी लौकिक सम्बन्ध अस्थायी और अनित्य होते हैं, वहीं अलौकिक सम्बन्ध स्थायी और नित्य होता है। जबतक सब प्रकारके सुख एवं सुविधाएँ हमें प्राप्त हैं, हमारे पास धन-सम्पत्ति है, मान-सम्मान है, हमारे सम्बन्धसे लोगोंके स्वार्थोंकी पूर्ति होती है, तबतक हमसे सम्बन्ध रखनेवालोंकी कमी नहीं होती। लोग हमारे सम्बन्धका हवाला देकर गौरवका अनुभव ही नहीं करते वरन् उससे लाभ उठानेका भी प्रयास करते हैं, परन्तु स्थिति जब इसके विपरीत होती है अर्थात् आपत्ति-विपत्तियाँ हमें चारों ओरसे घेर लेती हैं, हमारा वैभव नष्ट हो जाता है, पग-पगपर हमारा अपमान और तिरस्कार होता है, हमारे सम्बन्धोंके माध्यमसे काम बननेकी बजाय हमारे सम्पर्कमें आनेसे मिथ्या कलंक लगनेकी सम्भावना हो जाती है, तब अधिकांश लोग हमसे सम्बन्ध तोड़ लेते हैं। कभी हमसे सम्बन्ध था, यह प्रकट होनेमें भी लज्जाका अनुभव करते हैं और सम्बन्ध छिपानेकी चेष्टा करते हैं।

महापुरुषोंका कथन है कि सृष्टिके रचयिता एकमात्र भगवान् ही ऐसे हैं, जो जीवका किसी भी अवस्थामें साथ नहीं छोड़ते। वे हमसे एक क्षणके लिये भी अलग-थलग नहीं होते। वे आत्मरूपसे, अन्तर्यामीरूपसे सदैव हमारे साथ रहते हैं। उनका अनन्त सौहार्द हमें मिलता ही रहता है, चाहे हम कितने भी पतित क्यों न हो जायँ; क्योंकि वे पतितपावन भी हैं। हमारा उनका सम्बन्ध सदा एक-सा बना रहेगा। हमारी आत्मा परमात्माका अंश है और वह कभी अपने अंशीसे दूर नहीं हो सकता। श्रीरामचरितमानसमें गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं—
ईश्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥

गीतामें भी भगवान् श्रीकृष्णने कहा है—‘ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।’ (१५।७) अर्थात् इस देहमें यह जीवात्मा मेरा ही सनातन अंश है परमात्मा हमारा नित्य साथी है। कदाचित् हम अपने ऐसे नित्य साथीको पहचाननेकी भूल करते हैं। काश! प्रभुके साथ अपने नित्य सम्बन्धकी हमें स्मृति हो जाती, वह स्मृति सदा बनी रहती तो परिस्थिति भले कैसी भी क्यों न हो, हमारा जीवन दुखी न होता, इतना अस्त-व्यस्त न होता, जितना अब होता दिखायी देता है। हमें जो निराशा होती है, वह नहीं होती, जो नीरसताका बोध होता है, वह नहीं होता और जो असन्तोषका अनुभव होता है, वह भी नहीं होता।

सर्वविदित है कि हममेंसे प्रत्येककी रुचि भिन्न-भिन्न है। रुचिके अनुरूप ही हमारा उद्देश्य और कार्यक्षेत्र निर्मित और निर्धारित होता है। किसीका कार्यक्षेत्र स्वदेश-सेवाका है तो किसीका समाज-सुधारका, किसीका कार्यक्षेत्र उद्योगका है तो किसीका व्यापार-व्यवसायका। कार्य करते हुए जो लोग हमारे सम्पर्कमें आते हैं, उनके साथ हमारा एक सम्बन्ध-सा स्थापित हो जाता है। फिर परस्पर आदान-प्रदान होता है, लेन-देन होता है। प्रायः यह देखा गया है कि ऐसे सम्बन्ध स्थायी नहीं होते। ये सम्बन्ध तभीतक निभते हैं, जबतक हम अपने प्रयासमें सफल होते जाते हैं, जगत्की दृष्टिमें सफल होते दिखायी देते हैं। जैसे ही असफलता हाथ लगी अथवा लोगोंको लगा कि हमसे उन्हें इच्छित वस्तुकी प्राप्ति नहीं हो सकेगी कि बस, वहीं सम्बन्धोंमें दरार आ जाती है और लोग सम्बन्ध-विच्छेद करनेपर उतारू हो जाते हैं। पहले-जैसा उत्साह और प्रगाढ़ता नहीं रहती। साथी हमारी असफलताके कारणोंपर विचार नहीं करते। वे तो बस यही देखते हैं कि सफलता हमारा साथ दे रही है या नहीं। हमारी सफलता और

असफलतापर ही सम्बन्धोंका बनना और टूट जाना निर्भर करता है। जबतक हम सफल हैं, तबतक सभीका सम्बन्ध और सहयोग मिलता है। असफल हुए नहीं कि सम्बन्ध भी दरकने लगते हैं। इस सम्बन्धमें दुर्गा-सप्तशतीमें कथा आती है कि चक्रवर्ती सम्राट् राजा सुरथका समस्त भूमण्डलपर अधिकार था, वे अपनी प्रजाका औरस पुत्रोंकी भाँति धर्मपूर्वक पालन करते थे, परंतु ऐसे धर्मप्राण सम्राट् भी जब दुर्भाग्यवश कोलाविध्वंसियोंसे पराजित हो गये तो उनके दुरात्मा मन्त्रियोंने उनकी सेना और कोषको हस्तगत कर लिया और राजा सुरथको शिकार खेलनेके बहाने अकेले ही घोड़ेपर सवार होकर घने जंगलमें स्थित मुनि सुमेधाके



आश्रमपर जाना पड़ा। इस प्रकार असफलताके समय उनके अपनोंने भी उनका साथ छोड़ दिया था।

असफलताके कारण जब सम्बन्ध समाप्त हो जाते हैं तो उस समय हम एक विचित्र-सी स्थितिका सामना करनेके लिये विवश हो जाते हैं, अजीब-सी उधेड़-बुनमें पड़ जाते हैं, क्या करें और क्या न करें ? तब हमें निराशा और हताशा घेर लेती है और हम किंकर्तव्यविमूढ़से हो जाते हैं । ऐसा इसलिये होता है; क्योंकि हमने ऐसी कल्पना नहीं की थी, परंतु वास्तविकता यह है कि ऐसा होना ही था; क्योंकि हमारे सम्बन्धोंका आधार ही अस्थायी और

अनित्य था। वह एक ऐसा आधार था जो कि किसी स्वार्थ या हेतुको लेकर स्थापित हुआ था और उसकी पूर्ति न होनेपर वह टूट गया। संसारके सारे सम्बन्ध इसी प्रकार बनते-बिगड़ते रहते हैं। उनमें स्थायित्वका अभाव सदा बना रहता है। कसमे-वादे सब धराशायी हो जाते हैं और हम देखते रह जाते हैं। दूसरोंकी क्या कहें, परिवारके निकट सम्बन्धियोंके सम्बन्ध भी पल-भरमें बिखर जाते हैं।

ज्ञानीजन कहते हैं कि प्रभुके साथ हमारा जो अहैतुक नित्य सम्बन्ध है, यदि उसे हम जान लेते, उसपर भरोसा करते तो हमें निराशा हाथ नहीं लगती। संसारके सम्बन्ध-सहैतुक हैं, इसलिये उसमें सौहार्द भी नहीं है। विशुद्ध प्रेममें कोई भी हेतु नहीं होता और जहाँ विशुद्ध प्रेम नहीं, वहाँ हमारे लिये कोई अपना सर्वस्व न्योछावर कर दे, यह सम्भव नहीं। दूसरी बात यह है कि हमारा जिनसे सम्बन्ध होता है, उनकी शक्ति-सामर्थ्यकी भी एक सीमा है। उस सीमाके भीतर ही वे हमारी सहायता कर सकते हैं। तीसरी बात यह है कि उनका ज्ञान-कौशल भी देश-कालसे सीमित है। वे नहीं जानते कि विश्वमें कहाँ क्या हो रहा है, कल क्या हुआ और आनेवाले कलमें क्या होगा ? उनके पास जो सीमित ज्ञान है, उसीके आधारपर ही वे हमारे साथ सम्बन्ध रखकर कार्य करते हैं। इसीलिये वे जाने कितनी बार भूल कर बैठते हैं, किंतु परमात्माके साथ तो हमारा जो सम्बन्ध है, वह अनादि है, सनातन है, पुरातन है, सदा स्थिर एकरस रहनेवाला है। उनके सम्बन्धमें कोई हेतु नहीं है। वह सम्बन्ध अत्यन्त निर्मल, असीम, प्रेमसे परिपूर्ण और नित्य है। ईश्वरकी शक्ति-सामर्थ्यकी भी कोई सीमा नहीं। वे सर्वसमर्थ और सर्वज्ञ हैं। इसलिये उनसे कभी कोई तनिक-सी भी भूल नहीं होती।

प्रश्न उठता है कि जब हमारा ऐसे महामहिम प्रेममय परमात्मासे नित्य सम्बन्ध है तो फिर हम उनपर भरोसा क्यों नहीं करते? उत्तर स्पष्ट है कि हमारी इन्द्रियाँ स्वभावसे बहिर्मुखी हैं, बाहरकी ओर देखती हैं, भीतरकी ओर नहीं। हमारा मन और बौद्ध भाव प्राकृत है, मायिक

‘अवधके सुकुमार अल्पवय कुमार और इतना भारी धनुष?’ लोगोंके हृदय आशंकासे पूर्ण थे, किंतु निश्चित कोई नहीं था। जिन कुमारोंने सहस्र-सहस्र राक्षस खेलमें मार दिये, जिनकी पदरज पाकर पाषाणीभूता ऋषि-पत्नी परित्राण पा गयी, वे साधारण राजकुमार तो नहीं हैं। वे धनुष नहीं उठा सकते, यह कोई कैसे

महर्षि विश्वामित्र, महर्षि याज्ञवल्क्य, शतानन्दजी, मुनि-मण्डलीके तपस्वियोंके अतिरिक्त केवल महाराज जनक और कुमार लक्ष्मण बैठे रह गये अपने आसनोंपर। शेष सब उपस्थित लोग आसनोंसे गिर गये। परी

Hinduism Discord Server: <https://discord.gg/pharma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sharma

एक आखिरी उदाहरण है—दो विद्यार्थियों ने एक विद्यालय में दाखिला कराया, विद्यालय के प्राचार्य ने दोनों को बुलाया और दोनों को एक-एक पुस्तक दी और कहा एक वर्ष बाद जो परीक्षा होगी, उसमें सभी कुछ इसीमेंसे आयेगा, लेकिन एक शर्त है कि आप दोनों को परीक्षा से एक महीने पहले ये किताबें लौटानी होंगी। उनमेंसे एक विद्यार्थी ने रात-दिन मेहनत की और उस पुस्तक को पूरा याद कर लिया और नोट्स भी बना लिये पर दूसरे

* द्वादशज्योतिर्लिंगोंमें ओंकारेश्वर तो है ही, परंतु उसके साथ अमलेश्वरका भी नाम लिया जाता है। वस्तुतः नाम ही नहीं—इन दोनोंका अस्तित्व भी पृथक्-पृथक् है। अमलेश्वरका मन्दिर नर्मदाके दक्षिण किनारेकी बस्तीमें है। पर इन दोनों ही शिव-रूपोंकी गणना प्रायः एकमें ही की गयी है। कहा जाता है कि एक बार विन्ध्यपर्वतने पार्थिवार्चनसहित ओंकारनाथकी छः मासतक विकट आराधना की, जिससे प्रसन्न होकर भगवान् शिवजी प्रकट हुए। उन्होंने विन्ध्यपर्वतको मनोवांछित वर प्रदान किया। उसी समय वहाँ पधारे हुए देवों एवं ऋषियोंकी प्रार्थनापर उन्होंने 'ॐकार' नामक लिंगके दो भाग किये। इनमेंसे एकमें वे प्रणवरूपसे विराजे, जिससे उनका नाम ओंकारेश्वर पड़ा तथा पार्थिवलिंगसे सम्भूत भगवान् सदाशिव परमेश्वर, अमरेश्वर या अमलेश्वर नामसे प्रख्यात हुए।

केदारनाथ पर्वतराज हिमालयके केदार नामक



सत्ययुगमें उपमन्युजीने यहीं भगवान् शंकरकी आराधना की थी। द्वापरमें पाण्डवोंने यहाँ तपस्या की।



केदारनाथमें भगवान् शंकरका नित्य-सान्निध्य बताया गया है और यहाँके दर्शनोंकी बड़ी महिमा गायी गयी है।

संस्कृत-चरित—

मामा प्रयागदासजी

जनकपुरमें एक विधवा ब्राह्मणी रहती थी, लगभग सवा दो सौ वर्ष पूर्व। उसके एक पुत्र था। उसका नाम था प्रयागदत्त। बालक प्रायः पूछता—‘माँ! क्या मेरे और कोई नहीं है? जनकपुरकी स्त्रियाँ श्रीजानकीजीको अपनी पुत्री या बहन मानती हैं। वह ब्राह्मणी कहती—‘बेटा! तुम्हारे एक बहन है। वह अयोध्याके चक्रवर्ती महाराजके राजकुमारको ब्याही है।’ बालक कहता—‘मैं बहनके पास जाऊँगा।’ माता कहती—‘कुछ बड़े होनेपर जाना।’

बालकके मनपर अपने बहन-बहनोईका संस्कार पूरी तरह बैठ गया। कुछ बड़े होते ही उसने अयोध्या जानेकी हठ पकड़ ली। ब्राह्मणी भक्ता थी। उसने सोचा—‘मिथिलेशराजकुमारी क्या अपने इस अबोध भाईकी उपेक्षा कर सकती हैं?’ उस बेचारीके पास घरमें तो कुछ था नहीं। माँगकर थोड़ेसे चावलके कण ले आयी। उन्हें पीसकर उनके मीठे मोदक बना दिये। ऐसे मोदकोंको मिथिलामें ‘कासार’ कहते हैं। उनको एक कपड़ेमें बाँधकर पुत्रको दिया और कहा—‘ये अपनी बहन और जीजाजीको दे देना।’ लड़केको मार्गमें खानेके लिये उसने सत्तू दे दिये।

बालक प्रयागदत्त किसी प्रकार कुछ दिनमें अयोध्या पहुँचे। यहाँ पूछनेपर भी कोई उनके चक्रवर्ती बहनोईका पता नहीं बतलाता था। जिससे पूछते, वही हँस देता। बहुत परेशान हुए। थककर मणिपर्वतके पास सहस्रशीर्षा मन्दिर (यह आजकल मस्जिद है) के पास घने पेड़ोंके मध्यमें एक टीलेपर बैठ गये। बहुत थक गये थे। बहनोईपर बहुत अप्रसन्न हो रहे थे। कह रहे थे—‘पता नहीं कहाँ चला गया? अब उसे कहाँ ढूँढ़ने जाऊँ?’

भला, कोई उन चक्रवर्ती-राजकुमारको कहाँ ढूँढ़े। परंतु जो सचमुच उन्हें ढूँढ़ता है, ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहाँ वे उसे न मिल जायँ। प्रयागदत्तने देखा कि खूब बड़ा एक सफेद हाथी उनके सामने टीलेपर कहींसे आ

गया है। उसपर सोनेकी रत्नजटित अम्बारी पड़ी है। हाथी बैठ गया और उसमेंसे बहनोईके साथ बहन उतर पड़ी। किसीको कोई परिचय देना या पूछना नहीं पड़ा जैसे ये सदाके परिचित ही हों। श्रीजानकीजीने पूछा—‘भैया! माताजीने मेरे लिये कुछ भेजा है?’

भैया तो हक्के-बक्के देखते ही रह गये। कुछ देरमें सावधान होकर पोटली देते हुए बोले—‘मैंने तो तुमलोगोंको बहुत ढूँढ़ा। कोई तुमलोगोंका पता नहीं बताता था।’ पोटलीमेंसे श्रीकिशोरीजीने दो कासार ले लिये और शेष प्रयागदत्तको खानेके लिये दे दिया। कहा—‘भैया! तुम्हें बड़ा कष्ट हुआ। हमलोग ऐसे स्थानपर रहते हैं कि सब लोग हमारा पता नहीं जानते। अब तुम घर लौट जाओ। मातासे कहना कि हम सब बड़े आनन्दमें हैं।’ वे हाथीपर बैठ गये। हाथी वनमें जाकर अदृश्य हो गया।

प्रयागदत्त बहन-बहनोईके वियोगमें मूर्छित हो गये। कुछ देरमें कुछ चेतना आयी। उसी समय एक संत उधरसे निकले। पास जाकर उन्होंने देखा कि एक सुन्दर बालक भूमिपर पड़ा तड़प रहा है। प्रयागदत्तको किसी प्रकार वे अपनी गुफापर ले आये। स्वस्थचित्त होनेपर प्रयागदत्तने सब बातें बतायीं। एक घड़ी रात गये दो स्त्रियाँ आयीं और उन महात्माजीको दो थाल व्यंजनोंसे भरे देकर उन्होंने कहा—‘आज हमारे यहाँ पूजा हुई है। आपके लिये यह प्रसाद लायी हैं। अभी इसे ले लीजिये, थाल सबेरे चले जायँगे।’ थाल देकर वे शीघ्रतासे चली गयीं? दोनों थाल कमलके पत्तोंसे ढके थे। पत्ते हटानेपर महात्माजी तो चकित रह गये। स्वर्णके वे थाल जगमग कर रहे थे। महात्माजीने समझ लिया कि जगज्जननीने अपने भाईकी पहनाई की है।

वह दिव्य भोग प्रयागदत्तके कारण महात्माजीको भी प्राप्त हुआ। प्रातः थाल लेने तो कौन आनेवाला था। महात्माजीने प्रयागदत्तको थाल देना चाहा तो वे बोले—

निखिल-ब्रह्माण्डनायकके साले जो ठहरे। उत्पत्ति-स्थिति-संहारकारिणी सकल क्लेशहारिणी महाशक्ति उनकी बहन हैं। उनकी मस्ती अनन्त, अखण्ड, नित्य नूतन है। उनकी वाणियोंमें उस मस्तीकी एक झलक पायी जाती है।

जब तू ही है सब जीवों में, सब प्रेम-पात्र हैं, माननीय ।
सब सुखी रहें, तू हो प्रसन्न, सब में अर्चित तू अर्चनीय ॥

[प्रस्तुति—साधन-सूत्र : श्रीहरिमोहनजी]

रहीम—चप रहो।

रामसिंह—तहसीलदार साहब ! यह तहसील केवल मुसलमानोंकी तहसील नहीं है। इस तहसीलमें हिन्दू लोगोंका भी साझा है।

तहसीलदार—इसका मतलब ?

रामसिंह—मतलब यह कि तहसीलके भीतर गोकुशी नहीं हो सकती।

तहसीलदार—मेरा हुक्म है।

रामसिंह—आपका हुक्म कोई चीज नहीं।
कलक्टरका हुक्म दिखलाइये।

तहसीलदार—अपनी तहसीलका मैं ही कलक्टर हूँ। तहसील सबलगढका मैं जार्ज पंचम हूँ। समझे?

रामसिंह—चाहे आप साक्षात् खुदा ही क्यों न हों,
पर मेरे सामने ऐसा हरगिज नहीं होगा।

थानेदार—होगा, होगा और बीच खेत होगा।
हथियार रख दो और निकल जाओ तहसीलके बाहर।

रामसिंह—मेरा हथियार कौन छीन सकता है ?

थानेदार—मैं !

रामसिंह—आइये ! छीनिये आकर !

दीवान—क्या तुम्हारी आफत आ गयी है रामसिंह !
अपने अफसरसे ऐसी नाजायज गूफ्तगू !

रामसिंह—अफसर ! किस बेवकूफने इनको अफसर बनाया ? पब्लिकका दिल दुखाना अफसरका काम नहीं है ।

शानेदार—रहीम! अपना काम करो! काफिरको बकने दो। रहीमने गायके पास जाकर ज्यों ही छुरा ऊँचा किया, त्यों ही रामसिंहने दनसे गोली चला दी, रहीम मरकर गिर पड़ा।

थानेदार—पकडो, पकडो!

रामसिंहने दूसरी गोली थानेदारकी छातीपर रसीद की। 'हाय' कहकर थानेदार भी वहीं ढेर हो गये।

तहसीलदार उठकर भागने लगे। रामसिंहने खाली बन्दूक वहीं डाल दी और लपककर दूसरी भरी दुनाली उठा ली।

रामसिंह—कहाँ चले जाऊँ पंचम! जरा अपनी कलकटरीकी चाशनी तो चख लो।

इतना कहकर रामसिंहने घोड़ा दबाया। तहसीलदारकी खोपड़ीमें गोली लगी और वे वहीं ढेर हो गये।

विराम कहाँ, तड़तड़ गोली चल रही थी, निशाना अचूक था। ग्यारह आदमी जानसे मारे गये।

इसके बाद रामसिंहने गोमाताके चरण छुए और रस्सी खोल दी, वह बाहर भाग गयी। तब रामसिंहने एक गोली अपनी छातीमें मार ली और मरकर वहीं गिर पड़े।

सबेरा हुआ। सारा सामाचार शहरमें फैल गया। हिंदू पब्लिकने रामसिंहकी अर्थी बनायी। एक सेठजीने लाशपर पाँच सौ रुपयेका दुशाला डाल दिया। चार साधुओंने लाशमें कन्धा लगाया। शहरके हलवाइयोंने बतासे जमा किये। सराफोंने पैसे जमा किये। धनिकोंने पैसे और रेजगारी इकट्ठी की। माली लोगोंने फूल इकट्ठे किये। जब लाश चली तो आगे-आगे कुर्बानीवाली गाय सजाकर चलायी गयी; पीछे शंख, घण्टा और घड़ियालका नाद होने लगा। रास्तेमें फूल-बतासे, पैसा और रेजगारी बरसायी जाने लगी। विराट् जुलूस निकाला गया। कई एक सहृदय मुसलमान और ईसाई सज्जन भी साथ थे।

श्मशानपर जब लाश उतारी गयी, तब जनाब मुहम्मद-अली सौदागरने लाशपर गुलाबके फूल चढ़ाकर कहा— ‘हजरत मुहम्मद साहबने शरीफमें लिखा है कि उन जानवरोंको हरगिज न मारा जाय जो पब्लिकको आराम पहुँचाते हैं।’ बादशाह अकबर और बादशाह जहाँगीरने कानून बनाकर गोकुशी बन्द कर दी थी। अफसोस है कि हमारे तअस्सुबी मुसलमान, सिर्फ हिन्दू भाइयोंका दिल दुखानेकी गरजसे गोकुशी करते हैं। मैं उनपर लानत भेजता हूँ।

पादरी यंग साहब ईसाई थे। उन्होंने कहा—
‘सरकार अगर गोकुशी कराती होती तो विलायतमें खूब
गोकुशी की जाती। मगर वहाँ इसका नामोनिशानतक
नहीं है। विलायतके सभी अंग्रेज किसान गायोंको पालते
हैं। अफसोस है कि सिर्फ चमड़ेके व्यापारने गोकुशीका
बुरा काम जारी रखा है। भाई रामसिंहकी बहादुरीकी मैं
तारीफ करता हूँ। आप साहबानसे प्रार्थना करता हूँ कि
ठाकुर रामसिंहके बाल-बच्चोंके वास्ते कुछ चंदा किया
जाय।’ उसी समय पन्द्रह हजारका चन्दा लिखा गया।
उसमें सहृदय जनाब मुहम्मदअली साहबने तीन हजार
और पादरी साहबने एक हजार रुपये दिये।

यह घटना अक्षरशः सत्य है। केवल नाम बदल

Hinduism Discord Server <https://discord.gg/dharma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

साधनोपयोगी पत्र

(१)

भक्तकी सच्चे हृदयकी पुकार भगवान् अवश्य सुनते हैं

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपने एक पत्रमें लिखा था कि अच्छी स्थितिमें भी भगवान्पर भरोसा नहीं होता तब साधनकी शिथिलतामें तो हो ही कहाँसे, परंतु अब ज्यादा निराशा नहीं होती। सो भगवान्पर भरोसा तो अच्छी, बुरी सभी स्थितियोंमें रखना चाहिये। इसके सिवा और सहारा ही क्या है? बलवान् और निर्बल सभीके बल एक भगवान् ही हैं, परंतु अपनेको वास्तवमें निर्बल मानकर भगवान्के बलपर भरोसा रखनेवालेका बल तो भगवान् हैं ही। इस भगवान्के बलको पाकर वह अति निर्बल भी महान् बलवान् हो सकता है—‘मूकं करोति वाचालं पङ्गुं लङ्घयते गिरिम्’ प्रसिद्ध है।

भगवान्को पुकारनेभरकी देर है। बीमार बच्चा बाहर बैठी हुई माँको पुकारे तो क्या माँ उसकी पुकार नहीं सुनती या कातर पुकार सुनकर भी आनेमें कभी देर करती है? अवश्य ही यह बात होनी चाहिये कि माँ बाहर मौजूद हो और बच्चेकी सच्ची कातर-पुकार हो। माँ मौजूद नहीं होगी तो बिना सुने कैसे आयेगी और बच्चेकी पुकार केवल बनावटी और विनोदभरी होगी तो माँ सुनकर भी अपनी आवश्यकता न समझकर नहीं आयेगी। परंतु कातर पुकार सुननेपर तो माँसे रहा ही नहीं जायगा। जब माँकी यह बात है तब सारी माताओंका एकत्र केन्द्रीभूत स्नेह जिस भगवान्के स्नेहसागरकी एक बूँद भी नहीं है, वह भगवान्रूपी माँ दुखी जीव-संतानकी कातर पुकार सुनकर कैसे रह सकेगी? जीव एक तो उसे अपने पास मौजूद मानता ही नहीं, दूसरे उसकी पुकार बनावटी और लोग-दिखाऊ होती है। यदि जीव यह माने कि भगवान् यहाँ मौजूद हैं (जो वे वास्तवमें हैं ही; क्योंकि वे सर्वव्यापी हैं) और वे बड़े दयालु हैं तथा यों मानकर उन्हें कातर स्वरसे पुकारे तो

फिर उनके आनेमें देर नहीं होती। द्रौपदीकी पुकारपर चीर बढ़ाना और द्वारकासे तुरंत वनमें पहुँचकर पाण्डवोंको दुर्वासाके शापसे बचाना प्रसिद्ध ही है।

नियमोंका पालन प्रेम और अति दृढ़ताके साथ करते रहें। कृपा तो भगवान्की है ही। उस कृपाका अनुभव करते ही मनुष्य भगवदभिमुखी हो सकता है। सदा प्रसन्न रहिये और भगवान्की कृपाका दृढ़ भरोसा रखिये। भगवान्को नित्य अपने साथ मानिये, फिर पाप-ताप समीप भी नहीं आ सकते। ×××× निराश तो जरा भी न होइये। भगवान्के बलका भरोसा करनेपर निराशा कैसी? शेष प्रभुकृपा।

(२)

भगवत्साक्षात्कारके उपाय

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका पत्र मिला। आपके प्रश्नोंके उत्तर इस प्रकार हैं—

(१) उत्तम लेखोंके संग्रह करनेवाले तथा उत्तम लेख लिखनेवालोंको ईश्वरसाक्षात्कार होना ही चाहिये, यह कोई बात नहीं है। लेख संग्रह करना और लिखना तो परिश्रम, दक्षता, अध्ययन, अभ्यास तथा विद्यासे हो सकता है। प्रभुका साक्षात्कार तो प्रेम—सच्चे प्रभु-प्रेमसे होता है। वहाँ विद्या, यज्ञ, दान, कर्म, तप आदिका इतना महत्त्व नहीं है, जितना प्रेमका है। वास्तवमें सत्य प्रेम ही प्रभुका स्वरूप है—

प्रेम हरीको रूप है, वे हरि प्रेमस्वरूप।

एकहि है द्वैमें लसै, ज्यों सूरज अरु धूप॥

प्रभु-प्रेम सर्वथा अनन्य और अव्यभिचारी हुआ करता है। उस प्रेमका भाग दूसरे किसीको किंचित् भी नहीं मिलता।

मैं अपने सम्बन्धमें कुछ भी नहीं लिखना चाहता। इतना ही लिखता हूँ कि मैं अपने ऊपर भगवान्की बड़ी कृपा समझता हूँ और पद-पदपर उस परम कृपाका अनुभव करता हूँ।

प्रिय महोदय ! सप्रेम हरिस्मरण । आपका पत्र मिला । वस्तुतः ग्रहोंकी शान्तिके लिये शास्त्रोंमें जो जप, पूजा और अनुष्ठानादि बतलाये गये हैं, उन्हींको विधिपूर्वक करना चाहिये । किंतु सब ग्रहोंकी शान्तिके लिये सबसे बढ़कर उपाय तो भगवान्‌का निष्कामभावसे प्रेमपूर्वक भजन करना ही है । यही सत्य और अटल उपाय है । इससे सब ग्रहोंकी शान्ति अपने-आप हो जाती है । शेष प्रभुक्रपा ।

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
प्रतिपदा प्रातः ६।१ बजेतक	रवि	पुनर्वसु रात्रिमें २।३६ बजेतक	२५ जून	कर्कराशि रात्रिमें ९।३ बजेसे, अनुदया श्रीजगदीश रथयात्रा।
तृतीया रात्रिमें १।४९ बजेतक	सोम	पुष्य " १।२५ बजेतक	२६ "	मूल रात्रिमें १।२५ बजेसे।
चतुर्थी " १२।९ बजेतक	मंगल	आश्लेषा " १२।३५ बजेतक	२७ "	भद्रा दिनमें १२।५९ बजेसे रात्रिमें १२।९ बजेतक, सिंहराशि रात्रिमें १२।३५ बजेसे, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।
पंचमी " १०।५३ बजेतक	बुध	मघा " १२।४ बजेतक	२८ "	मूल रात्रिमें १२।४ बजेतक।
षष्ठी " १०।२ बजेतक	गुरु	पू० फा० " १२।० बजेतक	२९ "	श्रीस्कन्दषष्ठीव्रत।
सप्तमी " ९।३९ बजेतक	शुक्र	उ० फा० " १२।२५ बजेतक	३० "	भद्रा रात्रिमें ९।३९ बजेसे, कन्याराशि प्रातः ६।६ बजेसे।
अष्टमी " ९।४७ बजेतक	शनि	हस्त " १।२० बजेतक	१ जुलाई	भद्रा दिनमें ९।४४ बजेतक।
नवमी " १०।३० बजेतक	रवि	चित्रा " २।४६ बजेतक	२ "	तुलाराशि दिनमें २।३ बजेसे
दशमी " ११।३८ बजेतक	सोम	स्वाती रात्रिशेष ४।३९ बजेतक	३ "	x x x
एकादशी " १।१२ बजेतक	मंगल	विशाखा अहोरात्र	४ "	भद्रा दिनमें १२।२४ बजेसे रात्रिमें १।१२ बजेतक, वृश्चिकराशि रात्रिमें १२।२० बजेसे, श्रीहरिशयनी एकादशीव्रत।
द्वादशी " ३।२ बजेतक	बुध	विशाखा प्रातः ६।५५ बजेतक	५ "	चातुर्मास्यव्रत प्रारम्भ।
त्रयोदशी रात्रिशेष ५।२ बजेतक	गुरु	अनुराधा दिनमें ९।२५ बजेतक	६ "	प्रदोषव्रत, पुनर्वसुका सूर्य दिनमें २।८ बजे, मूल दिनमें ९।२५ बजेसे।
चतुर्दशी अहोरात्र	शुक्र	ज्येष्ठा " १२।२ बजेतक	७ "	धनुराशि दिनमें १२।२ बजेसे
चतुर्दशी प्रातः ७।२ बजेतक	शनि	मूल " २।३६ बजेतक	८ "	मूल दिनमें २।३६ बजेतक, भद्रा दिनमें ७।२ बजेसे रात्रिमें ७।५६ बजेतक, व्रत-पूर्णिमा।
पूर्णिमा दिनमें ८।५१ बजेतक	रवि	पू० षा० सायं ४।५७ बजेतक	९ "	मकरराशि रात्रिमें ११।२७ बजेसे, गुरुपूर्णिमा।

कृपानुभूति

(१)

श्रीहनुमान्जी महाराजकी कृपा

मेरी छः वर्षीय नातिन जो कि कक्षा-१ में पढ़ती है, वह हमेशा श्रीहनुमान्जी महाराजकी पूजा मेरे साथ करती है तथा उसको कई श्लोक भी याद हैं। शामको वह आरतीमें अक्सर मेरे साथ रहती है। दिनांक २१ अप्रैल २०१६ ई० को सायं ४ बजेकी घटना है, उसका छोटा भाई जो लगभग ढाई सालका है, खेलते वक्त उसकी नाकके अन्दर एक लाल रंगका मोती चला गया। मैं स्वयं भी पेशेसे चिकित्सक हूँ। मैंने मोती निकालनेका काफी प्रयास किया, परंतु वह नहीं निकला। थोड़ी देरमें हमलोग उसे लेकर मेडिकल कॉलेज अस्पताल गये, वहाँपर नाक-कान-गले विभागके डॉ० अग्रवाल, जो कि अपने निवासमें सो रहे थे, उन्हें उठाया और तत्काल समस्यासे अवगत कराया। इस बीच मेरी पत्नी उस बालकको गोदमें लेकर गाड़ीमें ही बैठी रही। जैसे ही डॉ० अग्रवालने ऑपरेशन टेबलमें पूरी तैयारी करके उसे अन्दर लानेको कहा, इतनेमें स्वतः ही उसके नाकसे वह लाल रंगका मोती निकल गया, जबकि वह बालक उस समय सो रहा था। तत्काल ही मैंने उन्हें बताया कि मोती तो अपने आप ही निकल गया। तत्पश्चात् उनका शुक्रिया अदा करके हम लोग बच्चेको लेकर घर आ गये। जब हमलोग अस्पतालमें थे, उस वक्त घरमें अकेले मेरी नातिन ही थी। हमलोगोंके जानेके बाद उसने अपने मनसे घरमें प्रतिष्ठित श्रीहनुमान्जी महाराजकी मूर्ति जहाँपर हमलोग रोज पूजा करते हैं, वहाँपर उसने अगरबत्ती जलायी और **‘बेगि हरो हनुमान महाप्रभु जो कुछ संकट होय हमारो’** का बार-बार पाठ करने लगी। अस्पतालसे आनेपर उसने यह बात हमलोगोंको बताया। हमारा स्वयंका विश्वास है कि बच्चेके आग्रहको श्रीहनुमान्जी महाराज टाल नहीं सके और एक गम्भीर घटनासे ऐसे बचा लिया, जैसे कुछ हुआ ही न हो।—डॉ० हरिकृष्ण पाण्डेय

(२)

रामललाकी कृपा

यह घटना सितम्बर २०१५ ई० की है। मैं रक्षाबन्धनके अवसरपर सपत्नीक अपने सालेके पास भिवाड़ी गया हुआ था।

रिजर्वेशन था। हम दिल्लीसे करीब ११ बजे रवाना होकर दूसरे दिन सुबह बनारस पहुँचे। वहाँ काशी विश्वनाथके दर्शन करके प्रयाग पहुँचे। वहाँ संगममें स्नान करके अगले दिन बसद्वारा ९ सितम्बरको सायं अयोध्या पहुँच गये। सबेरे सरयूमें स्नान किया, तत्पश्चात् हनुमानगढ़ी तथा अन्य दर्शनीय स्थानोंमें दर्शन करते हुए अन्तमें राम-जन्मस्थली गये।

रामललाका मन्दिर छावनी बना हुआ था। जगह-जगह दर्शनार्थियोंकी चेकिंग की जा रही थी। स्त्री-पुरुषकी अलग-अलग चेकिंगकी व्यवस्था थी। पहली चौकीपर चेकिंगके पश्चात् हम आगे बढ़े। दूसरी चौकीपर पहुँचनेपर मेरी पत्नीको तो आगे जानेकी अनुमति मिल गयी, किंतु मुझे वहींपर रोक लिया गया और कहा कि पैन्ट ऊपर करिये, आपने पैन्टमें क्या छिपा रखा है? मैंने पैन्टको घुटनेसे ऊपर करते हुए दिखाया कि मैंने कुछ नहीं छिपाया है। तब गार्डने कहा कि मशीन बता रही है कि कोई वस्तु छिपी हुई है। तब एकाएक मुझे स्मरण हो आया और मैंने निवेदन किया कि मेरे बायें पैरमें फ्रैक्चर हो गया था और पैरके अन्दर हड्डीमें स्टीलकी राड पड़ी है। उसने कहा आप अन्दर नहीं जा सकते। आप वापस पीछे चौकीपर जाकर अनुमति लेकर आयें। मैं पत्नीको वहीं ठहरनेके लिये कहकर वापस चौकीपर आया और वहाँ बैठे अधिकारीको सारी बात बताकर उनसे रामललाके दर्शनहेतु अनुमति प्रदान करनेका निवेदन किया। पर काफी अनुनय-विनय करनेके पश्चात् भी मुझे अनुमति नहीं मिली और मैं हताश होकर पत्नीको वापस लाने चला गया। मैंने पत्नीसे कहा, 'मुझे अन्दर जानेकी अनुमति नहीं मिली। तुम अन्दर जाकर रामललाके दर्शन कर आओ।' पत्नीने कहा—मैं अकेली नहीं जाऊँगी!

हम दोनोंने भगवान्से प्रार्थना की कि हे भगवान्! आपके द्वारपर आकर हम बिना दर्शन किये जा रहे हैं। यह कहकर हम दोनों वापस आनेको रवाना ही हुए थे कि भगवान्ने हमारी प्रार्थना सुन ली और गार्डके पास वायरलेस आया, जिसमें मुझे अन्दर जानेकी अनुमतिके लिये कहा गया था। घट-घटवासी प्रभुने हमारी प्रार्थना सुन ली थी। इस प्रकार रामललाकी कृपासे हमें उनके

पढ़ो, समझो और करो

ताँगेवालेकी आदर्श ईमानदारी और सेवाभाव

घटना पुरानी है, मध्यप्रदेशके एक प्रतिष्ठित व्यापारी पचास हजार रुपये लेकर दक्षिणमें (मैसूर, मदुरा और मद्रास) माल खरीदनेके लिये जा रहे थे। इस प्रान्तमें शतरंजी और साड़ियाँ एवं मैसूरमें चन्दनकी लकड़ीकी कलामय वस्तुएँ अच्छी और सुन्दर बनती हैं। व्यापारीने एक-एक हजारके ५० नोट बनयानके दोनों जेबोंमें रख लिये और जेबोंको खूब सी लिया था। सबसे पहले यह व्यापारी मैसूर उतरकर यहाँसे १४ मील दूर कृष्णराजसागरका बाँध और इलेक्ट्रिक प्रदर्शन देखने गया।

यह प्रदर्शनीय स्थल शामको ४ बजेसे रातके १० बजेतक मैसूर-सरकारकी ओरसे आम जनताके लिये खुला रहता है। व्यापारीने कृष्णराज-सागरका बाँध एवं अद्भुत विद्युत्-प्रकाश, जो कि फव्वारों और क्यारियोंमें अपनी अनोखी छटा दिखाकर दर्शकोंको मोहित कर लेता है, देखा। देखकर वह पुलकी सीढ़ियोंपर चढ़ रहा था कि उसे अचानक चक्कर आया और वह पुलकी सीढ़ियोंपर लुढ़कता हुआ नीचे चला आया।

व्यापारी सुदृढ़ शरीरवाला और शारीरिक शक्ति-सम्पन्न था। अतः वह हाथ-पैरों एवं मस्तकका रक्त पोंछकर फिर पुलकी सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। अन्तिम सीढ़ीपर ज्यों ही पैर रखा कि उसे फिर जबर्दस्त चक्कर आया और दूसरी बार पुनः सीढ़ियोंपर लुढ़कने लगा। पुलके पास ही ताँगा-स्टैंड था। कई ताँगेवाले खड़े थे, जिनमेंसे एक ताँगेवालेने इस व्यापारीको पुलकी सीढ़ियोंसे लुढ़कते देख लिया। उसने चाबुक ताँगेमें रखा और पुलपर आया। तबतक आहत व्यापारी लुढ़कता हुआ सबसे नीचेकी सीढ़ीपर आकर लहूलुहान हालतमें पड़ा था। बेहोशी भी आ गयी थी।

ताँगेवालेने उस रक्तरंजित व्यापारीको, जिसके वस्त्र रक्तमें सने थे, गोदीमें उठाया और जैसे-तैसे सीढ़ियाँ चढ़कर ताँगेमें सुला दिया। एक हाथसे व्यापारीको, जो

कि अर्धमृतक-सी अवस्थामें था, पकड़े और एक हाथसे घोड़ेकी रास थामे घोड़ेको हाँक रहा था। चार-पाँच मील चलनेके बाद व्यापारीको कुछ होश-सा आया और उसने लड़खड़ाती जबानसे पूछा, 'कौन?' 'मैं हूँ ताँगेवाला। मैंने आपको कृष्णराजसागरके पुलके जीनेसे गिरते हुए देखा था। आपके साथ कोई था नहीं और आप बेहोशीकी हालतमें थे। मेरे मनमें आया कि मैं एक घायल व्यक्तिकी सेवा करूँ और आपको अपने घर भेज दूँ। हूँ तो ताँगेवाला, पर ईमानदार हूँ और ईमानदारीके लिये ही जीता हूँ।' व्यापारीने कोटकी जेबमेंसे एक सौ रुपयेका नोट निकालकर ताँगेवालेको देते हुए कहा 'लो तुम्हारे लिये इनाम।'।

ताँगेवालेने व्यापारीसे कहा—'सेवाका मूल्य सोने-चाँदीके टुकड़ोंसे नहीं आँका जा सकता। मैं आपको इसलिये नहीं लाया कि आप मुझे इनाम दें और न मुझे इस प्रकारका लोभ-लालच ही है, मेरा पेशा ऐसा है कि सभ्य-समाज इस पेशेको हलका पेशा कहता है और हमारे समाजको बेईमान, धोखेबाज, चालबाज बतलाता है। पर ऐसी बात नहीं है। मैं तो भगवान्को चारों ओर देखकर जीता हूँ। मुझे डर लगता है कि यदि मैं बेईमान हो गया तो भगवान्के न्यायालयमें क्या उत्तर दूँगा। मैं ऐसा मानता हूँ कि इस प्रकार मेरा डरना मेरे लिये ईमानदार बननेके सम्बन्धमें रामबाण सिद्ध हुआ है।'।

ताँगेवालेका लंबा भाषण सुनकर व्यापारीने कोटकी दूसरी जेबमेंसे सौ-सौके पाँच नोट निकाल ताँगेवालेके हाथपर रख दिये। ताँगेवाला अबकी बार झल्ला उठा और उसने कहा, 'माफ कीजिये, मुझे एक भी पाई आपसे लेना हराम है!' और उसने सौ-सौके पाँच नोट व्यापारीको लौटा दिये, किंतु नोट व्यापारीके हाथमें न जाकर ताँगेमें ही गिर गये। ताँगेवालेने मुड़कर देखा तो व्यापारी बेहोश हो गया था और उसके मुँहसे सफेद

‘मैं ताँगेवालेकी हमदर्दीसे बहुत प्रभावित हुआ और उसे सौ रुपये इनाममें दिये, पर उसने नहीं लिये। फिर पाँच सौ रुपये इनाममें दिये। इनाम देनेके बाद ही मुझे बेहोशी आ गयी। होश आनेपर मैं आपलोगोंको अपने सामने देखता हूँ। मुझे यह पता नहीं कि ताँगेवालेने वे पाँच सौ रुपये लिये या नहीं; मुझे ईमानदार, नेक एवं सेवाभावी व्यक्ति मालूम होता है।’ इतनेमें कर्नाटक रेस्टोरॉके मैनेजर आ गये। उन्होंने वह रोजनामचा दिखलाया, जिसमें निम्न प्रकार लिखा हुआ था—दिनांक २२ दिसम्बर १९५४ श्रीमहेशचन्द्र कौल, फर्मका नाम महेशचन्द्र गिरिजाशंकर, निवासी मालपुरा, जिला बस्तर, मध्यप्रदेश। रोजनामचेपर तीन दिनोंतक रेस्टोरॉमें ठहरनेकी

तीसरे दिन महेशचन्द्र 'कौल' के छोटे भाई श्रीगिरिजाशंकर आ गये। उन्होंने महेशके मृत्यु-सम्बन्धी सभी समाचार ज्ञात किये। उन्हें भाईकी मृत्युसे असह्य दुःख हुआ; पर ताँगेवालेकी ईमानदारी, उदारता एवं निःस्वार्थ वृत्तिसे अपार आनन्द भी हुआ। गिरिजाशंकरने विचार किया कि भाई साहब पचास हजार रुपयेका माल खरीदने आये थे। अब वे असमयमें ही चले गये, फिर ये रुपये मैं वापस क्यों ले जाऊँ? बड़े भाईके स्मृतिस्वरूप ताँगेवालेकी सेवाके उपलक्ष्यमें उसे दान क्यों न कर दूँ? फलतः गिरिजाशंकरने पचास हजारकी बृहद् धनराशि ताँगेवालेको देते हुए कहा कि 'तुम्हें और तुम्हारे बच्चोंके ये काम आयेंगे।' पर ताँगेवालेने दोनों हाथ जोड़ते हुए कहा—'भाई! आप मुझे जो धनराशि दे रहे हैं, उसका मूल्य है; पर ईमानका मूल्य नहीं होता। अतः आप मुझे आशीर्वाद दें कि मेरे लिये सतत अमूल्य निधि ईमानकी प्राप्ति हो; फिर मैं संसारमें सबसे बड़ा धनिक हूँ, ऐसा मैं मानता हूँ। आप मुझे क्षमा कर दें। मैं आपकी आज्ञाका पालन करनेमें सर्वथा असमर्थ हूँ। रही बात बच्चोंकी, सो वे अपने भाग्यके निर्माता स्वयं हैं। गरीबीमें ईमान बना रहे, यही मुझे और मेरे परिवारके लिये सब कुछ है।' गिरिजाशंकरके मुँहसे अनायास निकल गया 'तुम इन्सान नहीं, इन्सानके रूपमें फरिश्ते हो। मैं अपने भाईको खोकर और तुमसे ईमानदारीका बोध-पाठ लेकर हर्ष-विषादके वातावरणमें अपने देश वापस जा रहा हूँ, तुम्हारी ईमानदारीकी चर्चा सर्वत्र करूँगा।' धन्य! (स्वतन्त्र)

मनन करने योग्य

अहंकार-नाश

किसी राष्ट्रकार्य-धुरन्धर अथवा साधारणसे व्यक्तिमें समस्त दुर्गुणोंका अग्रणी अहंकार या अभिमान जब प्रवेश पा जाता है, तब उसके कार्योंमें होनेवाली उन्नतिकी बात तो दूर रही, किये हुए कार्योंपर भी पानी फिरनेमें विलम्ब नहीं लगता। पर यदि उसे यथासमय सचेत कर दिया गया तो वह यशके शिखरपर पहुँच ही जाता है। इस प्रकारकी अनेक कथाएँ अपने इतिहास-पुराणादिमें हैं। इस सन्दर्भमें लगभग ३०० वर्ष पूर्वकी एक सत्कथा इस प्रकार है—

हिन्दू-स्वराज्य-संस्थापक श्रीशिवाजी महाराजके सद्गुरु श्रीसमर्थ रामदास स्वामी महाराजका तपःसामर्थ्य और उनका किया हुआ राष्ट्रकार्य अलौकिक है। सद्गुरुके द्वारा निर्दिष्ट मार्गका अनुसरण करके श्रीश्रीभवानी-कृपासे श्रीशिवाजी महाराजने कई किले जीत लिये। उस समय किलोंका बड़ा महत्त्व था। इसलिये जीते हुए किलोंको ठीक करवानेका एवं नये किलोंके निर्माणका कार्य सदा चलता रहता था और इस कार्यमें हजारों मजदूर सदा लगे रहते थे। सामनगढ़ नामक किलेका निर्माण हो रहा था, एक दिन उसका निरीक्षण करनेके लिये श्रीशिवाजी महाराज वहाँ गये। वहाँ बहुसंख्यक श्रमिकोंको कार्य करते देखकर उनके मनमें एक ऐसी अहंकार-भरी भावनाका अंकुर उत्पन्न हो आया कि ‘मेरे कारण ही इतने जीवोंका उदर-निर्वाह चल रहा है।’ इसी विचारमें वे तटपर घूम रहे थे। अन्तर्यामी सद्गुरु श्रीसमर्थ इस बातको जान गये और ‘जय जय रघुबीर समर्थ’ की रट लगाते हुए अकस्मात् न जाने कहाँसे वहाँ आ पहुँचे। उन्हें देखते ही श्रीशिवाजी महाराजने आगे बढ़कर दण्डवत् प्रणाम किया और पूछा, ‘सद्गुरुका शुभागमन कहाँसे हुआ?’ हँसकर श्रीसमर्थ

कार्य चल रहा है, इच्छा हुई कि मैं भी जाकर देखूँ। इसीसे चला आया। वाह! वाह! शिवबा! इस स्थानका भाग्योदय और इतने जीवोंका पालन तुम्हारे ही कारण हो रहा है।’ सद्गुरुके श्रीमुखसे यह सुनकर श्रीशिवाजी महाराजको अपनी धन्यता प्रतीत हुई और उन्होंने कहा—‘यह सब कुछ सद्गुरुके आशीर्वादका फल है।’

इस प्रकार बातचीत करते हुए वे किलेसे नीचे, जहाँ मार्ग-निर्माणका कार्य हो रहा था, आ पहुँचे। मार्गके बने हुए भागमें एक विशाल शिला अभी वैसी ही पड़ी थी। उसे देखकर सद्गुरुने पूछा—‘यह शिला यहाँ बीचमें क्यों पड़ी है?’ उत्तर मिला—‘मार्गका निर्माण हो जानेपर इसे तोड़कर काममें ले लिया जायगा।’ श्रीसद्गुरु बोले—‘नहीं, नहीं, कामको हाथों-हाथ ही कर डालना चाहिये; अन्यथा जो काम पीछे रह जाता है, वह हो नहीं पाता। अभी कारीगरोंको बुलाओ और इसके बीचसे दो भाग करा दो।’ तुरंत कारीगरोंको बुलाया गया और उस शिलाके समान दो टुकड़े कर दिये गये। सबोंने देखा कि शिलाके अंदर एक भागमें ऊखल-जितना गहरा एक गड्ढा था, जिसमें पर्याप्त जल भरा था और उसमें एक मेंढक बैठा हुआ था। उसे देखकर श्रीसद्गुरु बोले—‘वाह, वाह, शिवबा, धन्य हो तुम! इस शिलाके अन्दर भी तुमने जल रखवाकर इस मेंढकके पोषणकी व्यवस्था कर रखी है।’

बस, पर्याप्त थे इतने शब्द श्रीशिव-छत्रपतिके लिये। उनके चित्तमें प्रकाश हुआ। उन्हें अपने अहंकारका पता लग गया और पता लगते ही ‘इतने लोगोंके पेट मैं भरता हूँ—इस अभिमान-तिमिरका तुरंत नाश हो गया। उन्होंने तुरंत श्रीसद्गुरुके चरण पकड़ लिये और अपराधके लिये क्षमा-याचना की।

बोले—‘शिवबा! मैंने सुना कि यहाँ तुम्हारा बहुत बड़ा

पिछले कुछ दिनोंसे अनुपलब्ध पुस्तकें—अब उपलब्ध

कोड	पुस्तकका नाम	मूल्य ₹	कोड	पुस्तकका नाम	मूल्य ₹
1593	अन्त्यकर्म-श्राद्धप्रकाश	१३०	1162	एकादशीव्रतका माहात्म्य	२२
1189	संक्षिप्त गरुड़पुराण	१६०	1627	रुद्राष्टाध्यायी	३०
1183	संक्षिप्त नारदपुराण	२००	29	श्रीमद्भागवत-महापुराण—मूल, मोटा टाइप	१६०
1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण	१२०	557	मत्स्यमहापुराण	२७०
1897	श्रीमद्देवीभागवत—सटीक, प्रथम खण्ड	२००	1728	सार्थ ज्ञानेश्वरी (कन्नड़)	२००
1898	श्रीमद्देवीभागवत—सटीक, द्वितीय खण्ड	२००	800	गीता-तत्त्व-विवेचनी (तमिल)	१८५
48	श्रीविष्णुपुराण—सटीक	१४०	1903	श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण—(तमिल) II	२००
1980	ज्योतिषतत्त्वाङ्क	१३०	1776	श्रीमद्भागवतसुधासागर (मराठी)	२५०
40	भक्त-चरिताङ्क	२३०	1533	श्रीरामचरितमानस (सटीक) वि.सं., गुजराती	३००

श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारके कुछ पत्रोंके संग्रह

श्रीजयदयालजी गोयन्दकाके कुछ पत्रोंके संग्रह

कोड	पुस्तकका नाम	मूल्य ₹	कोड	पुस्तकका नाम	मूल्य ₹
353	लोक-परलोक-सुधार—६८ पत्रोंका संग्रह	२०	277	उद्धार कैसे हो?—५१ पत्रोंका संग्रह	१०
354	आनन्दका स्वरूप—६५ पत्रोंका संग्रह	२०	278	सच्ची सलाह—८० पत्रोंका संग्रह	१२
355	महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर—९३ पत्रोंका संग्रह	३०	280	साधनोपयोगी पत्र—७२ पत्रोंका संग्रह	१०
356	शान्ति कैसे मिले?—९४ पत्रोंका संग्रह	२५	281	शिक्षाप्रद पत्र—७० पत्रोंका संग्रह	१५
357	दुःख क्यों होते हैं?—	२५	282	पारमार्थिक पत्र—९१ पत्रोंका संग्रह	१५

‘गीताप्रेस’ गोरखपुरकी निजी दूकानें एवं स्टेशन-स्टाल

निम्नलिखित सभी गीताप्रेस गोरखपुरकी निजी दूकानों एवं स्टेशन-स्टालोंपर ‘कल्याण’ का शुल्क जमा कराके रसीद प्राप्त की जा सकती है।

इन्दौर-	जी० 5, श्रीवर्धन, 4 आर. एन. टी. मार्ग
ऋषिकेश-	गीताभवन, पो० स्वर्गाश्रम
कटक-	भरतिया टावर्स, बादाम बाड़ी
कानपुर-	24/55, बिरहाना रोड
कोयम्बटूर-	गीताप्रेस मेंशन, 8/1 एम, रेसकोर्स
कोलकाता-	गोविन्दभवन; 151, महात्मा गाँधी रोड
गोरखपुर-	गीताप्रेस—पो० गीताप्रेस
चेन्नई-	इलेक्ट्रो हाउस नं० 23, रामनाथन स्ट्रीट किल पोक
जलगाँव-	7, भीमसिंह मार्केट, रेलवे स्टेशनके पास
दिल्ली-	2609, नयी सड़क
नागपुर-	श्रीजी कृपा कॉम्प्लेक्स, 851, न्यू इतवारी रोड
पटना-	अशोकराजपथ, महिला अस्पतालके सामने
बेंगलोर-	7/3, सेकेण्ड क्रास, लालबाग रोड
भीलवाड़ा-	जी 7, आकार टावर, सी ब्लॉक, गान्धीनगर
मुम्बई-	282, सामलदास गाँधी मार्ग (प्रिन्सेस स्ट्रीट)
राँची-	कार्ट सराय रोड, अपर बाजार, बिड़ला गद्दीके प्रथम तलपर
रायपुर-	मित्तल कॉम्प्लेक्स, गंजपारा, तेलघानी चौक (छत्तीसगढ़)
वाराणसी-	59/9, नीचीबाग
सूरत-	वैभव एपार्टमेन्ट, भटार रोड
हरिद्वार-	सब्जीमण्डी, मोतीबाजार
हैदराबाद-	41, 4-4-1, दिलशाद प्लाजा, सुल्तान बाजार

दिल्ली (प्लेटफार्म नं० 5-6); नयी दिल्ली (नं० 16); हजरत निजामुद्दीन [दिल्ली] (नं० 4-5); कोटा [राजस्थान] (नं० 1); बीकानेर (नं० 1); गोरखपुर (नं० 1); गोण्डा (नं० 1); कानपुर (नं० 1); झाँसी (नं० 1); लखनऊ [एन० ई० रेलवे]; वाराणसी (नं० 4-5); मुगलसराय (नं० 3-4); हरिद्वार (नं० 1); पटना (मुख्य प्रवेशद्वार); राँची (नं० 1); धनबाद (नं० 2-3); मुजफ्फरपुर (नं० 1); समस्तीपुर (नं० 2); छपरा (नं० 1); सीवान (नं० 1); हावड़ा (नं० 5 तथा 18 दोनोंपर); कोलकाता (नं० 1); सियालदा मेन (नं० 8); आसनसोल (नं० 5); कटक (नं० 1); भुवनेश्वर (नं० 1); अहमदाबाद (नं० 2-3); राजकोट (नं० 1); जामनगर (नं० 1); भरुच (नं० 4-5); वडोदरा (नं० 4-5); इन्दौर (नं० 5); जबलपुर (नं० 6); औरंगाबाद [महाराष्ट्र] (नं० 1); सिकन्दराबाद [आ० प्र०] (नं० 1); विजयवाड़ा (नं० 6); गुवाहाटी (नं० 1); खड़गपुर (नं० 1-2); रायपुर [छत्तीसगढ़] (नं० 1); रायगढ़ (नं० 1); बिलासपुर (नं० 1); बेंगलुरु (नं० 1); यशवन्तपुर (नं० 6); हुबली (नं० 1-2); श्री सत्यसाई प्रशान्ति निलयम् [दक्षिण-मध्य रेलवे] (नं० 1)।

फुटकर पुस्तक-दूकानें— चूरू-ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, पुरानी सड़क, ऋषिकेश-मुनिकी रेती; बेरहामपुर-म्युनिसिपल मार्केट काम्प्लेक्स, के० एन० रोड, नडियाड (गुजरात) संतराम मन्दिर।



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

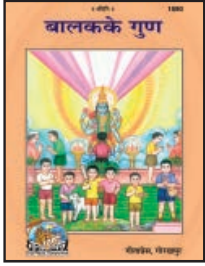
FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

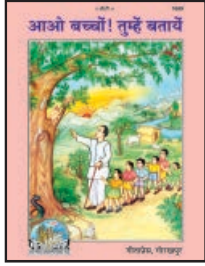
By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!

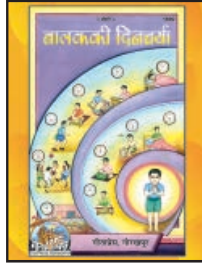
गीताप्रेससे प्रकाशित बाल-साहित्य ग्रन्थाकार रंगीन चित्रोंके साथ



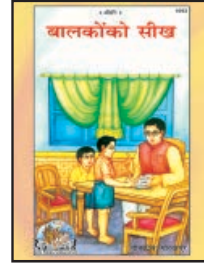
कोड 1690 ₹३५



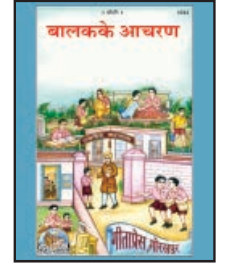
कोड 1689 ₹२५



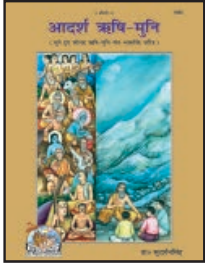
कोड 1692 ₹२५



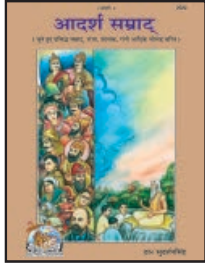
कोड 1693 ₹२५



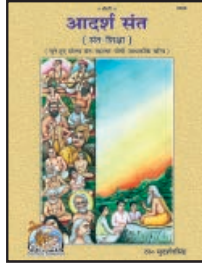
कोड 1694 ₹२५



कोड 1986 ₹२५



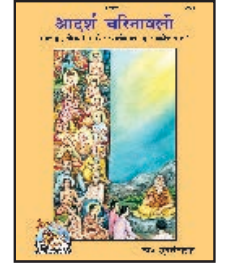
कोड 2022 ₹२५



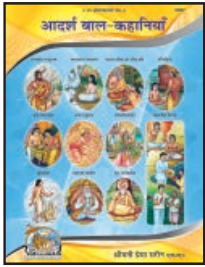
कोड 2026 ₹२५



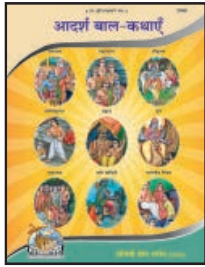
कोड 2028 ₹२५



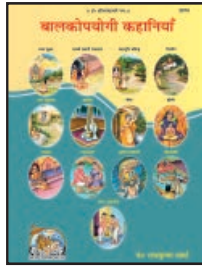
कोड 2004 ₹२५



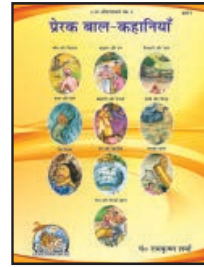
कोड 2067 ₹२५



कोड 2068 ₹२५



कोड 2070 ₹२५



कोड 2071 ₹२५



कोड 2072 ₹२५

अब उपलब्ध—हिन्दू-संस्कृति-अङ्क (कोड 518)—यह विशेषाङ्क भारतीय संस्कृतिके विभिन्न पक्षों—हिन्दू-धर्म, दर्शन, आचार-विचार, संस्कार, रीति-रिवाज, पर्व, उत्सव, कला-संस्कृति और आदर्शोंपर प्रकाश डालनेवाला तथ्यपूर्ण बृहद् (सचित्र) दिग्दर्शन है। कुछ विद्वानोंने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है तो कुछने इसे 'हिन्दू-संस्कृतिका विश्वकोश' कहा है। भारतीय संस्कृतिके उपासकों, अनुसन्धानकर्ताओं और जिज्ञासुओंके लिये यह अवश्य पठनीय तथा उपयोगी दिशा-निर्देशक है। इस अंकमें परिशिष्टाङ्ककी सामग्री समायोजित कर दी गयी है जिससे यह और भी उपयोगी बन गया है। मूल्य ₹२५०

1. कल्याणके पाठकोंकी शिकायतोंके शीघ्र समाधानके लिये कल्याण-कार्यालयमें दो फोन 09235400242/09235400244 उपलब्ध हैं। इन नम्बरोंपर प्रत्येक कार्य-दिवसमें दिनमें 9.30 बजेसे 4.30 बजेतक सम्पर्क कर सकते हैं। अतिरिक्त नं० 9648916010 है जिसपर SMS एवं WhatsApp की सुविधा भी उपलब्ध है।
2. कल्याणके सदस्योंको मासिक अंक निश्चित रूपसे उपलब्ध हो, इसके लिये वार्षिक सदस्यता शुल्क ₹ २२० के अतिरिक्त ₹ २०० देनेपर मासिक अंकोंको भी रजिस्टर्ड डाकसे भेजनेकी व्यवस्था है।